पूर्वांचल खेती

वर्ष : 29 नवम्बर 2019 अंक : 11

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

वर्ष 29 | नवम्बर, 2019 | अंक 11

संरक्षक
डॉ. बिजेन्द्र सिंह
कुलपति

प्रधान सम्पादक
प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक
डॉ. अनिल कुमार
सह प्राध्यापक (पशु विज्ञान)
मो. नं. 9415140493

सम्पादक मण्डल

डॉ. आर. आर. सिंह
प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

डॉ. वी. एस. चन्देल
सह प्राध्यापक, उद्यान

डॉ. शैलेश कुमार सिंह
वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष, केवीके
बाराबंकी

डॉ. अनिल कुमार
सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

डॉ. वी. पी. चौधरी
सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार
सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

सम्पादक
उमेश पाठक
मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

गेहूँ उत्पादन की लाभकारी खेती 01
—डॉ. विपुल सिंह, डॉ. ए.पी. राव एवं अमरनाथ

बहुपयोगी अलसी की उन्नत खेती 05
—डॉ. राम प्रताप सिंह

आलू की अधिक पैदावार कैसे लें 07
—राजकुमार, अमरनाथ सिंह, नवनीत कुमार एवं देवेश पाठक

दलहनी फसलों का उत्तर जैव उर्वरक—राइजोबियम कल्चर 10
—डॉ. राम प्रताप सिंह

फसल अवशेष जलाने से नष्ट होती है भूमि की 12
उर्वराशक्ति
—डॉ. एल.सी. वर्मा, डॉ. पी.के. मिश्रा, डॉ. एस.एन. सिंह एवं डॉ. प्रदीप कुमार

आय सम्वर्धन हेतु फल एवं सब्जी उत्पादन की 15
नवीनतम तकनीकियाँ
—डॉ. एस.पी. सिंह, डॉ. एस.के. तोमर एवं डॉ. एस.के. सिंह

ढींगरी मशरूम की खेती एक लाभकारी व्यवसाय 19
—डॉ. प्रदीप कुमार

आँवला फलों का परिरक्षण 23
—शशांक सिंह, आकांक्षा सिंह एवं नवीन विक्रम सिंह

रैबीज (जलांतक) पशुओं से मनुष्यों में 28
होने वाली एक घातक बीमारी
—प्रो. नमिता जोशी एवं प्रो. आर.के. जोशी

सितम्बर माह में किसान भाई क्या करें? 30
—डॉ. अनिल कुमार

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 31

बॉक्स सूचनाएं

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये, आगे बढ़िये 11
संतुलित उर्वरक का प्रयोग 22
कृषि लागत कम करने हेतु सुझाव 22
लेखकों से अनुरोध 31

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/प्रभारी अधिकारी	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	वाराणसी	डॉ. संजीत कुमार	9837839411	05542–248019
2.	बस्ती	डॉ. एस. एन. सिंह	9450547719	05498–258201
3.	बलिया	डॉ. रवि प्रकाश मौर्य	9453148303	–
4.	फैजाबाद	डॉ. शशिकान्त यादव	9415188020	05278–254522
5.	मऊ	इं एस. एन. सिंह चौहान	–	0547–2536240
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	9458362153	0541–2260595
7.	बहराइच	डॉ. एम. पी. सिंह	9415172725	05252–236650
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	9415155818	–
9.	आज़मगढ़	डॉ. के. एम. सिंह	9307015439	–
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	9455501727	
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	9984369526	–
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. एल. सी. वर्मा	7376163318	05541–241047
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	–
15.	बलरामपुर	डॉ. वी. पी. सिंह	9839420165	–
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	9918622745	–
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	9415039117	–
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	9838952621	–
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. विनायक शाही	8755011086	–
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. ओम प्रकाश	9452489954	–
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	9450885913	–
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	–	–
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	9411320383	–

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि ज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाषा कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. शशांक शेखर सिंह	–	–
2.	गोण्डा	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
3.	देवरिया	श्रीमती सरिता श्रीवास्तव	9415419712	–
4.	गाजीपुर	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाषा कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. एस. के. सिंह	9450164714	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. तेजेन्द्र कुमार	9415560503	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. गजेन्द्र सिंह	7379576412	0548–223690

प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

उत्तर भारत में जलने वाली पराली के कारण देश को लगभग दो लाख करोड़ रूपये की क्षति होता है। यह क्षति वायु प्रदूषण के कारण होने वाली बीमारियों पर खर्च के रूप में होता है। यह आंकलन अंतरराष्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान (आई एफ पी आर आई) ने लगाया है। इस संस्था ने पाँच साल तक फसल अवशेष (पराली) जलाने का अध्ययन किया और कहा कि फसल अवशेषों और पटाखों के कारण लगभग 190 बिलियन डॉलर अथवा भारत के सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 1.7 प्रतिशत क्षति होती है।

खरीफ की फसल कटने के बाद पंजाब और हरियाणा में पराली जलाने के कारण होने वाले प्रदूषण हवाओं के साथ दिल्ली–एन.सी.आर. में पहुँच जाता है। अध्ययन के अनुसार केवल धान अवशेष को जलाने से 2015 में भारत में 66200 मौतें हुईं, इतना ही नही अवशेष जलने से मिट्टी की उर्वरता पर भी बुरा असर पड़ा। साथ ही इससे पैदा होने वाली ग्रीन हाऊस गैस के कारण पर्यावरण को भी क्षति पहुँचती है। फसल जलने के नकारात्मक स्वास्थ्य प्रभावों से फसलों की उत्पादकता भी कम होती है तथा अर्थव्यवस्था व स्वास्थ्य पर दीर्घकालिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। अतः किसान भाईयों को चाहिए कि वे खेतों में पराली न जलाकर उसका उपयोग अन्य कार्यों में लेते हुए, खेतों की उर्वरता बढ़ाने में करें।

पूर्वांचल खेती के इस अंक में **गेहूँ उत्पादन की लाभकारी खेती, बहुपयोगी अलसी की उन्नत खेती, आलू की अधिक पैदावार कैसे लें, दलहनी फसलों का उत्तर जैव उर्वरक–राइजोबियम कल्चर, फसल अवशेष जलाने से नष्ट होता है भूमि की उर्वराशक्ति, आय सम्वर्धन हेतु फल एवं सब्जी उत्पादन की नवीनतम तकनीकियाँ, ढींगरी मशरूम की खेती एक लाभकारी व्यवसाय, आँवला फलों का परिरक्षण, रैबीज (जलांतक) पशुओं से मनुष्यों में होने वाली एक घातक बीमारी, नवम्बर माह में किसान भाई क्या करें? एवं प्रश्न किसानों के जवाब वैज्ञानिकों के** जैसे लेख प्रकाशित किए जा रहे हैं, मुझे पूर्ण विश्वास है कि किसानों की आय में वृद्धि के लिये यह अंक उपयोगी सिद्ध होगा।

(ए.पी. राव)

गेहूँ उत्पादन की लाभकारी खेती

डॉ. विपुल सिंह*, डॉ. ए.पी. राव** एवं अमरनाथ***

हमारे देश में गेहूँ की खेती का प्रमुख स्थान है। पंजाब, हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश इसके मुख्य उत्पादक राज्य हैं। भारत देश में 10 करोड़ टन से अधिक गेहूँ का उत्पादन हो रहा है। देश की बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए गेहूँ उत्पादन में वृद्धि की और अधिक आवश्यकता है, इसके लिए गेहूँ की उन्नत उत्पादन तकनीकियाँ जैसे पारिस्थिकी अनुसार किस्मों का चुनाव, बोने की विधियाँ, बीज दर, पोषक तत्व प्रबंधन, सिंचाई प्रबंधन, खरपतवार नियंत्रण तथा फसल संरक्षण आदि अपनाकर अधिक उत्पादन के साथ–साथ आर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

उपयुक्त जलवायु

गेहूँ के बीज अंकुरण के लिए 20 से 25 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उचित रहता है। गेहूँ की बढ़वार के लिए 27 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक तापमान होने पर फसल पर विपरीत प्रभाव पड़ता है क्योंकि तापमान अधिक होने से वाष्पोत्सर्जन प्रक्रिया द्वारा अधिक ऊर्जा की क्षति होती है तथा बढ़वार कम रह जाती है, जिसका फसल उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। फूल आने के समय कम तथा अधिक तापमान हानिकारक होता है।

भूमि का चयन

सिंचित क्षेत्रों में गेहूँ की खेती हर प्रकार की भूमि में की जा सकती है, किन्तु अच्छी पैदावार के लिए बलुई, दोमट एवं चिकनी दोमट, समतल एवं जल निकास वाली उपजाऊ भूमि अधिक उपयुक्त है। गेहूँ के लिए अधिक लवणीय एवं क्षारीय भूमि उपयुक्त नहीं है।

खेत की तैयारी

भारी भूमि में पहले मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई के बाद डिस्क हैरो से दो बार जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बनाकर ही गेहूँ की बुवाई करना उचित होगा। डिस्क हैरो के प्रयोग से धान के ठूंठ छोटे–छोटे टुकड़ों में कट जाते हैं। इनको शीघ्र सड़ाने हेतु 15–20 किग्रा नत्रजन (यूरिया के रूप में) प्रति हेक्टेयर खेत को तैयार करते समय पहली जुताई पर अवश्य दे देना चाहिए। ट्रैक्टर चालित रोटावेटर द्वारा एक ही जुताई में खेत पूर्ण रूप से तैयार हो जाता है।

उन्नत किस्में

गेहूँ उत्पादक किसान बन्धुओं को अपने क्षेत्र की प्रचलित और अधिकतम उपज देने वाली रोग रोधी किस्म का चयन करना चाहिए, कुछ प्रचलित और उन्नत किस्में निम्नवत् हैं।

सिंचित अवस्था में समय से बुवाई

एच.डी. 2967, एच.डी. 4713, एच.डी. 2851, एच.डी. 2894, एच.डी. 2687, डी.बी.डब्ल्यू. 17, पी.बी.डब्ल्यू. 550, पी.बी.डब्ल्यू. 502, डब्ल्यू.एच. 542, डब्ल्यू.एच. 896 और यू.पी. 2338 आदि प्रमुख हैं, इनकी बुवाई का उपयुक्त समय 10 नवम्बर से 25 नवम्बर माना जाता है।

सिंचित अवस्था में देरी से बुवाई

एच.डी. 2985, डब्ल्यू.आर. 544, राज 3765, पी.बी. डब्ल्यू. 373, डी.बी.डब्ल्यू. 16, डब्ल्यू.एच. 1021, पी.बी. डब्ल्यू. 590 और यू.पी. 2425 आदि प्रमुख हैं, इनकी बुवाई का उपयुक्त समय 25 नवम्बर से 25 दिसम्बर माना जाता है। अति विलम्ब की दशा में हलना, उन्नत हलना एवं गोल्डन हलना प्रजाति की बुवाई करें।

असिंचित अवस्था में समय से बुवाई

एच.डी. 2888, पी.बी.डब्ल्यू. 396, पी.बी.डब्ल्यू.299,

*पी.एच.डी. (सस्य विज्ञान), **निदेशक प्रसार, ***प्रशिक्षण सहायक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या–224229

डब्ल्यू.एच.533, पी.बी.डब्ल्यू.175 और कुन्दन आदि प्रमुख हैं।

लवणीय मृदाओं के लिए

के.आर.एल. 213, 1,4 व 19, के.आर.एल. 210 प्रमुख हैं।

बुवाई का समय

उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों में सिंचित दशा में गेहूँ बोने का उपयुक्त समय नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा है, लेकिन उत्तरी पूर्वी भागों में मध्य नवम्बर तक गेहूँ बोया जा सकता है। देर से बोने के लिए उत्तर पश्चिमी मैदानों में 25 दिसम्बर के बाद तथा उत्तर पूर्वी मैदानों में 15 दिसम्बर के बाद गेहूँ की बुवाई करने से उपज में भारी हानि होती है। इसी प्रकार बारानी क्षेत्रों में अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक बुवाई करना उत्तम रहता है। यदि भूमि की ऊपरी सतह में संरक्षित नमी प्रचुर मात्रा में हो तो गेहूँ की बुवाई 15 नवम्बर तक कर सकते हैं।

बीज की मात्रा

बीज साफ, स्वस्थ एवं खरपतवारों के बीजों से रहित होना चाहिए। सिकुड़े, छोटे एवं कटे–फटे बीजों को निकाल देना चाहिए। हमेशा उन्नत, नई तथा क्षेत्र विशेष के लिए संस्तुत प्रजातियों का चयन करना चाहिए। बीज दर दानों के आकार, जमाव प्रतिशत, बोने का समय, बोने की विधि और भूमि की दशा पर निर्भर करती है। सामान्यतः यदि 1000 बीजों का भार 38 ग्राम है, तो एक हेक्टेयर के लिए लगभग 100 किग्रा बीज की आवश्यकता होती है। यदि दानों का आकार बड़ा या छोटा है, तो उसी अनुपात में बीज दर घटाई या बढ़ाई जा सकती है।

इसी प्रकार सिंचित क्षेत्रों में समय से बुवाई के लिए 100 किग्रा प्रति हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है, लेकिन इन क्षेत्रों में देरी से बोने के लिए 125 किग्रा प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं के लिए बीज दर 125 किग्रा प्रति हेक्टेयर रखनी चाहिए। सदैव प्रमाणित बीजों का प्रयोग करना चाहिए और हर तीसरे वर्ष बीज बदल देना चाहिए।

बीज उपचार

गेहूँ की खेती अधिक उपज के लिए बीज अच्छी किस्म का प्रमाणित ही बोना चाहिए तथा बुवाई से पहले प्रति किग्रा बीज को 2 ग्राम थाईरम या 2 ग्राम केप्टान प्रति किग्रा बीज के दर से उपचारित करना चाहिए। इसके उपरान्त दीमक नियंत्रण के लिए क्लोरोपाइरीफास की 4 मिली मात्रा से तथा अंत में जैव उर्वरक एजोटोबैक्टर व पीएसबी कल्चर के तीन–तीन पैकेट से एक हेक्टेयर में प्रयोग होने वाले सम्पूर्ण बीज को उपचारित करने के बाद बीज को छाया में सुखा कर बुवाई करनी चाहिए।

बुवाई की विधि एवं अन्तराल

गेहूँ की खेती हेतु बुवाई सीड ड्रिल या देशी हल (केरा या पोरा) से ही करनी चाहिए। छिटकवा विधि से बोने से बीज ज्यादा लगता है तथा जमाव कम, निकाई–गुड़ाई में असुविधा तथा असमान पौध संख्या होने से पैदावार कम हो जाती है। सीड ड्रिल की बुवाई से बीज की गहराई और पंक्तियों की दूरी नियंत्रित रहती है तथा इससे जमाव अच्छा होता है। विभिन्न परिस्थितियों में बुवाई हेतु फर्टी–सीड ड्रिल (बीज एवं उर्वरक एक साथ बोने हेतु), जीरो टिल ड्रिल (जीरो टिलेज या शून्य कर्षण में बुवाई हेतु), फर्रो ड्रिल (मेड़ पर बुवाई हेतु) आदि मशीनों का प्रचलन बढ़ रहा है प्रयोग में लाना चाहिए।

इसी प्रकार फसल अवशेष के बिना साफ किए हुए अगली फसल के बीज बोने के लिए रोटरी–टिल ड्रिल मशीन भी उपयोग में लाई जा रही है। सामान्यतः गेहूँ को 15 से 23 सेमी की दूरी पर पंक्तियों में बोया जाता है। पंक्तियों की दूरी मिट्टी की दशा सिंचाइयों की उपलब्धता तथा बोने के समय पर निर्भर करती है। सिंचित एवं समय से बोने हेतु पंक्तियों की दूरी 23 सेमी रखनी चाहिए। देरी से बोने पर और ऊसर भूमियों में पक्तियों की दूरी 15 से 18 सेमी रखनी चाहिए।

सामान्य दशाओं में बौनी किस्मों के गेहूँ को लगभग 5 सेमी गहरा बोना चाहिए, ज्यादा गहराई में बोने से जमाव तथा उपज पर बुरा प्रभाव पड़ता है। बारानी क्षेत्रों में जहाँ बोने के समय भूमि में नमी कम हो वहाँ बीज को कूँड़ों में बोना अच्छा रहता है। बुवाई के बाद पाटा नहीं लगाना चाहिए, इससे बीज ज्यादा गहराई में पहुँच जाते हैं, जिससे जमाव अच्छा नहीं होता है।

पोषक तत्व प्रबंधन

गेहूँ उगाने वाले ज्यादातर क्षेत्रों में नाइट्रोजन की कमी पाई जाती है तथा फास्फोरस और पोटाश की कमी भी क्षेत्र विशेष में पाई गई है। पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, राजस्थान एवं उत्तर प्रदेश के कुछ इलाकों में गंधक की कमी भी पाई गई है। इसी प्रकार सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जस्ता, मैंगनीज तथा बोरॉन की कमी गेहूँ उगाये जाने वाले क्षेत्रों में देखी गई है। इन सभी तत्वों की भूमि में मृदा परीक्षण को आधार मानकर आवश्यकतानुसार प्रयोग करना चाहिए, लेकिन ज्यादातर किसान विभिन्न कारणों से मृदा परीक्षण नहीं करवा पाते हैं, ऐसी स्थिति में गेहूँ के लिए उर्वरक की संस्तुत दर इस प्रकार है।

समय से सिंचित दशा

लगभग 125 किग्रा नाइट्रोजन, 60 किग्रा फास्फोरस तथा 40 से 60 किग्रा पोटाश की आवश्यकता होती है।

विलम्ब से बुवाई

इस अवस्था में तथा कम पानी की उपलब्धता वाले क्षेत्रों में समय से बुवाई की अवस्था में प्रयोग किये गये उर्वरक की मात्रा के साथ लगभग 20 से 40 किग्रा पोटाश की अधिक आवश्यकता होती है।

बारानी क्षेत्र

समय से बुवाई करने पर 40 से 50 किग्रा नाइट्रोजन, 20 से 30 किग्रा फास्फोरस तथा 25 किग्रा पोटाश की आवश्यकता होती है। असिंचित दशा में उर्वरकों को कूड़ों में बीजों से 2 से 3 सेमी गहराई में डालना चाहिए तथा बालियाँ आने से पहले यदि पानी बरस जाए तो 20 किग्रा प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन का छिड़काव करना चाहिए।

सिंचित दशाओं में फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन की एक तिहाई मात्रा खेत की तैयारी करते समय बुवाई से पहले भूमि में अच्छी तरह मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष दो तिहाई मात्रा का आधा प्रथम सिंचाई के बाद तथा शेष आधा द्वितीय सिंचाई के बाद छिड़क देना चाहिए। बुवाई के पूर्व खेत तैयारी के समय 25 से 30 टन अच्छी तरह से गली–सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट मिट्टी में अवश्य मिलाएं।

सिंचाई प्रबंधन

बुवाई के पश्चात फसल की क्रान्तिक अवस्थाओं पर 6 सिंचाई पर्याप्त होती है। प्रथम सिंचाई शीर्ष जड़ जमते समय जब फसल 20 से 25 दिन की हो जाये तब करनी चाहिए। दूसरी सिंचाई जब कल्ले बनने लगे तथा फसल 45 से 50 दिन की हो जाए, तीसरी सिंचाई गाँठ बनते समय बुवाई के 65 से 70 दिन बाद, चौथी सिंचाई बालियाँ निकलते समय बुवाई के 85 से 90 दिन बाद, पाँचवी सिंचाई 100 से 110 दिन बाद जब फसल दूधिया अवस्था में हो तथा अंतिम सिंचाई दाना पकते समय करनी चाहिए, जब फसल 115 से 120 दिन की हो जाए।

यदि सिंचाई के लिए पानी की उपलब्धता कम हो तथा चार सिंचाई ही दे सकते हैं जिसे शीर्ष जड़ बनते समय, गाँठ बनते समय, बालियाँ निकलते समय और दाना पकते समय करनी चाहिये। सिंचाई फौव्वारा विधि से करने पर क्यारी सिंचाई की अपेक्षा कम पानी की आवश्यकता होती है।

खरपतवार नियंत्रण

गेहूँ की फसल के साथ अनेकों खरपतवार जिनमें बथुआ, खरथुआ, सैंजी, सत्यानाशी, हिरनखुरी, कटैली, जंगलीपालक एवं वन प्याजी, मोरवा, गुल्ली डंडा व जंगली जई इत्यादि उगते हैं। प्रमुख खरतपवार जो पोषक तत्व, नमी व स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा कर फसल उत्पादन को काफी कम कर देते हैं। अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए उचित खरपतवार नियंत्रण उचित समय पर करना बहुत ही आवश्यक है। फसल

के बुवाई के एक या दो दिन पश्चात पेन्डीमेथलीन खरपतवारनाशी की 2.50 लीटर मात्रा पानी में घोल बनाकर समान रूप से छिड़काव कर देना चाहिये।

गेहूँ का मामा एवं जंगली जई के नियंत्रण हेतु क्लोडिनोफाप प्रोपेराजिल 15 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. की 400 ग्राम प्रति हेक्टेयर को लगभग 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर बुवाई के 20–25 दिन के बाद फ्लैटफैन नाजिल से छिड़काव करना चाहिए।

पौध संरक्षण

गेहूँ की खेती में अनेकों प्रकार के कीट जिनमें दीमक, आर्मी वर्म, एफिड एवं जैसिड तथा चूहे नुकसान पहुँचाते हैं। भूमि की तैयारी करते समय 20 से 25 किग्रा इन्डोसल्फान बुरक देना चाहिए। यदि दीमक का प्रकोप खड़ी फसल में हो तो क्लोरीपाइरीफास की 3–4 लीटर प्रति हेक्टेयर मात्रा सिंचाई के पानी के साथ दे देना चाहिए। रस चूसने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड की 1.5 लीटर मात्रा को 600–800 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

गेहूँ की खेती में कई तरह की बीमारियों का भी प्रकोप होता है, जैसे झुलसा एवं पत्ती धब्बा, रोली रोग, कण्डुवा, मोल्या, धब्बा के लिए मेन्कोजेब 2 किग्रा, रोली रोग के लिए गंधक का चूर्ण 25 किग्रा या 2 किग्रा मैन्कोजेब, कन्डुवा के लिए बीज को फफूँदनाशक जैसे थीरम या वीटावैक्स से उपचार, मोल्या रोग के लिए कार्बोफ्यूरोन 3 प्रतिशत रसायन व ईयर कोकल एवं टुन्ड्र रोग के लिए बीज को नमक के 20 प्रतिशत के घोल से उपचारित कर बुवाई करनी चाहिए। चूहों के नियंत्रण हेतु एल्युमिनियम फास्फाइड की गोलियाँ प्रयोग करनी चाहिए।

कटाई एवं मड़ाई

जब पौधे पीले पड़ जाये तथा बालियाँ सूख जाये और दानों में 15 से 20 प्रतिशत नमी हो तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। कटाई के पश्चात फसल को 3–4 दिन सुखाना चाहिए तथा मंड़ाई करके अनाज में जब 10 प्रतिशत नमी रह जाए तो भंडारण कर देना चाहिए।

पैदावार

गेहूँ की फसल से उपज किस्म के चयन, खाद और उर्वरक के उचित प्रयोग और फसल की देखभाल पर निर्भर करती है। लेकिन सामान्यतः उपरोक्त वैज्ञानिक विधि से खेती करने पर 40 से 70 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तक अनाज की उपज प्राप्त की जा सकती है।

गेहूँ की खेती से अधिक पैदावार के लिए आवश्यक बिंदु

(1) गेहूँ की खेती के लिए शुद्ध एवं प्रमाणित बीज की बुवाई बीज शोधन के बाद की जाए।

(2) प्रजाति का चयन क्षेत्रीय अनुकूलता एवं समय विशेष के अनुसार किया जाए।

(3) संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर सही समय पर उचित विधि से किया जाए।

(4) क्रान्तिक अवस्थाओं (ताजमूल अवस्था एवं पुष्पावस्था) पर सिंचाई समय से उचित विधि एवं मात्रा में की जानी चाहिए।

(5) गेहूँ की खेती में कीड़े एवं बीमारियों से बचाव हेतु विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

(6) गेहूँ की खेती में कीट और रोगों का प्रकोप होने पर उसका नियंत्रण समय से किया जाना चाहिए।

(7) गेहूँ की खेती के लिये जीरोटिलेज एवं रेज्ड बेड विधि का प्रयोग किया जाए।

(8) गेहूँ की खेती हेतु खेत की तैयारी के लिए रोटावेटर, हैरो का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(9) गेहूँ की खेती में अधिक से अधिक जीवांश खादों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(10) गेहूँ की खेती के लिए यथा सम्भव आधी खादों की मात्रा जीवांश खादों से पूरी की जानी चाहिए।

(11) गेहूँ की खेती हेतु जिंक और गंधक की कमी वाले खेतों में बुवाई से पहले इनकी संतुलित मात्रा अवश्य डालें। ●

बहुपयोगी अलसी की उन्नत खेती

डॉ. राम प्रताप सिंह*

यह रबी मौसम में उगायी जाने वाली महत्वपूर्ण तिलहनी फसल है। हमारे देश में अलसी मुख्य रूप से मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र और बिहार राज्यों में उगायी जाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अलसी को सुपर फूड का दर्जा दिया है। उच्च रक्तचाप व हृदय रोगियों को नियमित रूप से अलसी खाने की सलाह दी जाती है। इसका प्रयोग खाद्य तेल की अपेक्षा औद्योगिक रूप में अधिक किया जाता है। अलसी से विभिन्न व्यंजन जैसे बिस्किट, ब्रेड, केक, आइस्क्रीम, लड्डू आदि बनाये जाते हैं। इसे सब्जी, दही, दाल व सलाद आदि में डालकर प्रयोग किया जा सकता है। इसका तेल खाने के काम आता है तथा खली दुधारू पशुओं के लिए काफी पौष्टिक होती है। अलसी का तेल औषधियों एवं घरेलू उपयोग में प्रयोग किया जाता है। इसकी फसल सिंचित व असिंचित दोनों दशाओं में सफलतापूर्वक की जाती है।

अलसी के पौष्टिक गुण, महत्व एवं उपयोगिता

अलसी में मुख्य पौष्टिक तत्व ओमेगा–3, फैटी एसिड, एल्फालिनोलेनिक एसिड, लिग्नीन, प्रोटीन एवं फाइबर होते हैं। अलसी में लगभग 18 प्रतिशत ओमेगा–3 फैटी एसिड होती है। अलसी हमारे रक्त में कोलेस्ट्रोल की मात्रा को बढ़ाती है, जबकि हानिकारक कोलेस्ट्रोल की मात्रा को कम करती है। अलसी सेवन करने वालों की दिल की बीमारियों के कारण अकस्मात मृत्यु नहीं होती है। अलसी ब्लड प्रेशर नियंत्रित रखती है तथा डाइबिटीज के शरीर पर होने वाले दुष्प्रभावों को कम करती है। अलसी में 27 प्रतिशत घुलनशील व अघुलनशील दोनों तरह के फाइबर होते हैं। अतः कब्ज के रोगियों को भी बहुत राहत देती है।

सारिणी–1
अलसी की उन्नतशील प्रजातियों एवं उसकी विशेषता का विवरण

प्रजाति का नाम	पकने की अवधि	उपज (कुन्तल/हे)		तेल का प्रतिशत	विशेष
(क) बीज उद्देशीय					
गरिमा	125–130	18–20	–	42–43	गेरूई/रतुआ अवरोधी तथा उकठा सहनशील मैदानी क्षेत्रों हेतु।
श्वेता	130–135	15–18	10–15	43–44	तदैव
शुभ्रा	130–135	20–22	10–12	45	समस्त उत्तर प्रदेश हेतु गेरूई/रतुआ/उकठा व कलिका मक्खी अवरोधी।
लक्ष्मी	115–120	15–18	10–15	45	बुन्देलखण्ड हेतु संस्तुत गेरूई/रतुआ अवरोधी।
पद्मिनी	120–125	15–18	12–15	45	बुन्देलखण्ड हेतु संस्तुत फफँदीचूर्ण रोग अवरोधी।
शेखर	135–140	20–25	14–16	43	मैदानी क्षेत्रों हेतु उपयुक्त।
शारदा	100	8.0	–	45	सफेद बुकनी अवरोधी।
मदू आजाद	122–125	16.3	–	45	झुलसा अवरोधी।
(ख) बीज द्विउद्देशीय					
गौरव	135–140	18–20	रेशा 12–14	43	मैदानी क्षेत्रों हेतु।
शिखा	135–140	20–22	रेशा 13–15	41	तदैव।
रश्मि	135–140	20–24	रेशा 14–15	41–42	तदैव।
पार्वती	140–145	20–22	रेशा 13–14	41–42	बुन्देलखण्ड हेतु संस्तुत उकठा, गेरूई/रतुआ व फफूँदी चूर्ण रोग अवरोधी।

*सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान विषय), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या–224229

जलवायु

वानस्पतिक वृद्धि के समय तापमान मध्यम ठंडा होना चाहिए। इसके लिए 21–26 सेंटीग्रेड तापमान अच्छा माना जाता है। यह सामान्यतः 45 से 75 सेमी वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में आसानी से उगायी जा सकती है।

भूमि का चुनाव

अलसी को सभी प्रकार की भूमियों में उगाया जा सकता है, परन्तु भारी भूमियों में इसकी अच्छी पैदावार होती है। यह अम्लीय से लेकर क्षारीय भूमियों में भी उगायी जा सकती है। इसके लिए पर्याप्त जल निकास वाली दोमट से मटियार व चिकनी दोमट भूमि उपयुक्त मानी जाती है। यह उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल की जलोढ़ मृदाओं में भी उगायी जाती है।

खेत की तैयारी

अलसी के अच्छे अंकुरण के लिए खेत अच्छी तरह तैयार करना चाहिए। इसके लिए खेत की एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से व दो–तीन बार डिस्क हैरो या कल्टीवेटर से जुताई करनी चाहिये। अच्छे अंकुरण के लिए बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। अच्छी पैदावार के लिए अन्तिम जुताई के पहले 8–10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी प्रकार से सड़ी गोबर की खाद खेत में मिलायें। इसके बाद पाटा लगाकर खेत को समतल कर लें।

बीजदर

एक हेक्टेयर क्षेत्र में बुवाई के लिए बीज उद्देशीय प्रजातियों के लिए लगभग 20 से 25 किग्रा बीज पर्याप्त होता है, जबकि परती क्षेत्रों में बुवाई के लिए 30–35 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए। द्विउद्देशीय प्रजातियों के लिए 50 किग्रा बीज पर्याप्त होता है।

बीज शोधन

अलसी की फसल में झुलसा तथा उकठा आदि का संक्रमण प्रारम्भ में बीज या भूमि अथवा दोनों से होता है, जिनसे बचाव के लिए बीज को 2.5 ग्राम थीरम एवं 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम से प्रति किग्रा बीज की दर से उपचार करके बोना चाहिए।

बुवाई का समय एवं विधि

अलसी की अच्छी पैदावार के लिए बुवाई का समय बड़ा महत्वपूर्ण है। बोने का उचित समय अक्टूबर के प्रथम सप्ताह से लेकर नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक उपयुक्त होता है। इसकी बुवाई हल के पीछे कूँड़ों में 25 सेमी दूरी पर करें।

बुवाई की दूरी

बीज उद्देशीय प्रजातियों के लिए कूँड़ से कूँड़ की दूरी 25 सेमी तथा द्विउद्देशीय प्रजातियों के लिए 20 सेमी रखना चाहिए।

सारिणी–2
फसल की स्थिति के अनुसार उर्वरक प्रयोग

फसल की स्थिति	यूरिया (किग्रा)		सिंगल सुपर फास्फेट (किग्रा)		म्यूरेट ऑफ पोटाश (किग्रा)	
	हेक्टेयर	एकड़	हेक्टेयर	एकड़	हेक्टेयर	एकड़
सिंचित अवस्था	130	52	187	75	50	20
असिंचित अवस्था	86	35	187	75	25	10

उर्वरकों की मात्रा

असिंचित क्षेत्र के लिए अच्छी उपज प्राप्त हेत नत्रजन 50 किग्रा, फास्फोरस 40 किग्रा एवं पोटाश 40 किग्रा तथा सिंचित क्षेत्रों में 100:60:40:30 किग्रा क्रमशः नत्रजन, फास्फोरस पोटाश एवं सल्फर प्रति हेक्टेयर की दर से करें। नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस पोटाश एवं सल्फर की पूरी मात्रा बुवाई के समय प्रयोग करें। सिंचित दशा में नत्रजन की शेष आधी मात्रा टाप ड्रेसिंग के रूप में प्रथम सिंचाई के बाद प्रयोग करें।

(शेष पृष्ठ 27 पर)

आलू की अधिक पैदावार कैसे लें

राजकुमार*, अमरनाथ सिंह**, नवनीत कुमार* एवं देवेश पाठक*

भारत में सब्जियों में आलू का प्रमुख स्थान है। यद्यपि इसका उत्पादन अन्य सब्जियों की अपेक्षा बहुत अधिक किया जा रहा है। फिर भी अन्य विकसित राष्ट्रों की तुलना में इसका उत्पादन कम है। भारत में गेहूँ, मक्का, धान के बाद चौथी मुख्य फसल आलू है। उत्तर प्रदेश में कुल 0.55 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में आलू की खेती होती है जिससे 13.57 मैट्रिक टन उत्पादन प्राप्त होता है। उत्तर प्रदेश की आलू उत्पादकता 24.4 टन/हेक्टेयर है।

सारिणी–1
उत्तर प्रदेश के लिए उपयुक्त प्रजातियाँ

प्रजाति	उत्पादकता (कु./हे.)
70–80 दिन में तैयार होने वाली प्रजतियाँ	
कुफरी चन्द्रमुखी	225–270
कुफरी सूर्या	250–300
कुफरी अशोक	250–300
कुफरी ख्याति	250–300
कुफरी पुखराज	250–300
90–100 दिन में तैयार होने वाली प्रजतियाँ	
कुफरी बहार	300–350
कुफरी बादशाह	350–400
कुफरी सतलज	350–400
कुफरी सदा बहार	350–400
कुफरी अरूण	400–450
कुफरी मोहन	350–400
कुफरी ललित	350–400
कुफरी गंगा	350–400
कुफरी लीमा	350–400
100–110 दिन में तैयार होने वाली प्रजतियाँ	
कुफरी चिपसोना–1	300–350
कुफरी चिपसोना–2	300–350
कुफरी चिपसोना–3	300–350
कुफरी फ्राई सोना	300–350

जलवायु

आलू की खेती ठण्डे मौसम में की जाती है। आलू के उचित विकास के लिए कम आर्द्रता एवं चमकीली धूप वाले दिनों की आवश्यकता होती है। जमाव के लिए 25 डिग्री सेन्टीग्रेड एवं विकास के लिए 15 से 25 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान की आवश्यकता होती है। दिन का तापमान 20–24 डिग्री सेन्टीग्रेड एवं रात्रि का 12–14 डिग्री सेन्टीग्रेड कन्द निर्माण के लिए सर्वोत्तम होता है। 33 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक तापमान पर कन्द निर्माण पूर्णतः रूक जाता है।

मृदा

आलू विभिन्न प्रकार की मृदाओं में पैदा की जा सकती है। लेकिन उचित जल निकास वाली बलुई दोमट से दोमट जीवांशयुक्त जिसका पी.एच. 6.5 से 7.5 तक हो, आलू की खेती के लिए अति उपयुक्त है। बहुत अधिक एवं बहुत कम पी.एच. मान वाली भूमि में पौधों के विकास के साथ–साथ पोषक तत्वों की उपलब्धता भी बाधित होती है।

खाद एवं उर्वरक

उत्तर प्रदेश की परिस्थितियों में अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए बुवाई के 3–4 सप्ताह पूर्व 25–30 टन सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर क्षेत्रफल के अनुसार प्रयोग करना चाहिए। जमीन की किस्म एवं पोषक तत्वों की उपलब्धता के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। विश्वविद्यालय इस क्षेत्र के लिए 150 किग्रा नाइट्रोजन, 100 किग्रा फास्फोरस एवं 120 किग्रा पोटाश उर्वरक डालने की संस्तुति करता है। बुवाई के समय आधी नाइट्रोजन की मात्रा के साथ फास्फोरस एवं पोटाश उर्वरकों की पूरी मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। शेष आधी नाइट्रोजन की मात्रा बुवाई के लगभग एक माह बाद आलू की मिट्टी चढ़ाते समय प्रयोग करना उपयुक्त होता है।

*सब्जी विज्ञान विभाग, **परियोजना सहायक, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या–224229

बुवाई का समय, बीज दर एवं बीज का चयन

पूर्वी उत्तर प्रदेश में आलू की बुवाई हेतु 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक का समय उपयुक्त होता है। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए 30–35 कुन्तल बीज की आवश्यकता पड़ती है। बीज के लिए प्रयुक्त होने वाली कन्दों का वजन 30–40 ग्राम होना चाहिए। आलू के बीज को तीन ग्राम मैंकोजेब या दो ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किग्रा बीज को तीन मिनट तक पानी में डुबोकर छाया में सुखाकर बोना चाहिए।

बुवाई की विधि दूरी

बुवाई के लिए मेड़ी विधि सबसे उत्तम है। इस विधि में खेत की तैयारी के बाद बुवाई कतार से कतार 60 सेमी, कन्द से कन्द 20 सेमी की दूरी पर करना चाहिए। इसके बाद कुदाल व फावड़े से आलू के कन्दों को ढक देना चाहिए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 से 60 सेमी पौध से पौध की दूरी 15–20 सेमी तथा गहराई 8–10 सेमी होनी चाहिए।

खरतपवार प्रबंधन

आलू की बुवाई के तुरन्त बाद उपलब्ध पलवार का प्रयोग करें। पलवार के उपलब्ध न होने की स्थिति में बुवाई के तीन दिन के अन्दर पेन्डीमेथीलीन 1.0 किग्रा/हे अथवा 5 प्रतिशत जमाव पर 350 ग्राम/हे की दर से 750 लीटर पानी में मिलाकर उचित नमी रहने पर प्रयोग करें। तदोपरान्त एक निराई के बाद उचित अवस्था पर मिट्टी चढ़ा दें।

सिंचाई

आलू की फसल में आवश्यकतानुसार 10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। ध्यान रहे कि पानी आलू की मेड़ी की आधी ऊँचाई से ऊपर न जाने पाए।

मेड़ी चढ़ाना

बुवाई के 25–30 दिन बाद कुदाल से मेड़ियों के बीच गुड़ाई करके साथ ही साथ मेड़ियों को भी यथा सम्भव गिरा लें। इसके बाद आधी नाइट्रोजन उर्वरक की मात्रा का छिड़काव करके मेड़ी चढ़ा दें तथा दूसरे दिन हल्की सिंचाई कर दें।

खुदाई एवं उपज

आलू की खुदाई प्रजाति के अनुसार पहले से सुनिश्चित कर लें कि कौन सी किस्म के पकने का समय क्या है, पैदावार किस्म और समय पर निर्भर करता है। आमतौर पर 250 से 350/400 कुन्तल प्रति हेक्टेयर आलू की पैदावार होती है।

भण्डारण

आलू की खुदाई के बाद उत्पाद को अंधेरे एवं हवादार स्थान पर 10–15 दिन रखें। उसके उपरान्त जूट के 50 किग्रा क्षमता वाले हवादार बोरों में भरकर मार्च के अन्त तक शीतगृह में भण्डारित कर देना चाहिए।

आलू में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनका नियंत्रण

(1) आलू का पिछेती झुलसा रोग

मौसम में आर्द्रता जब 80 प्रतिशत से अधिक हो जाता है उस स्थिति में आलू में पिछेती झुलसा रोग लगने की संभावना बढ़ जाती है। इस रोग का कारक फाइटोप्थोरा इनफेस्टांस नामक फफूँद है। यह रोग पौधों के पत्ते, डंठल और कन्द सभी में लगता है। आरम्भिक लक्षण पत्तियों पर छोटे हल्के पीले अनियमित धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं जो शीघ्र ही बढ़कर बड़े, गीले दिखने वाले धब्बे बनाते हैं। बाद में पत्तियों के निचले भाग पर इन धब्बों के चारों ओर अँगूठीनुमा सफेद फफूँद आ जाते हैं। इस रोग से बचाव के लिए पिछेली झुलसा अवरोधी प्रजातियों जैसेः कुफरी बादशाह, कुफरी सतलज, कुफरी पुष्कर व कुफरी आनन्द आदि का चयन करना चाहिए। रोग दिखाई देने की अवस्था में मैन्कोजेब फफूँदीनाशी के 0.25 प्रतिशत घोल (2.5 ग्राम/लीटर पानी) का

छिड़काव करना चाहिए। इस छिड़काव के 10 दिन के अन्तराल पर दूसरा छिड़काव रिडोमिल एमजेड/करजेट एम 8/सेक्टिंन 60 डब्ल्यू.पी. में से किसी एक दवा का 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। अगर आवश्यक हो तो तीसरा छिड़काव 0.25 प्रतिशत मैनकोजेब का दूसरे छिड़काव के 12–15 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए।

(2) आलू का अगेती झुलसा

मौसम में गर्म नम वातावरण होने पर आलू में अगेती झुलसा का प्रकोप होने की संभावना बढ़ जाती है। इस रोग का कारक अल्टरनेरिया सोलेनाई नामक फफूँद है। यह मुख्य रूप से आलू की पत्तियों एवं कन्दों को नुकसान पहुँचाता है। शुरू में इस रोग का लक्षण निचली व पुरानी पत्तियों पर 1–2 मिमी आकार के गोल अण्डाकार भूरे धब्बों के रूप में दिखाई देता है। बाद में यह धब्बे आकार में बड़े होकर कोणीय रूप धारण कर लेते हैं। कन्दों पर इसके लक्षण भूरे गोल या अनियमित आकार वाले धँसे हुए धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। इस रोग उपचार हेतु बीज रोगरहित स्वस्थ और प्रमाणित बीज बोना चाहिए एवं दवा मैन्कोजेब फफूँदीनाशी के 0.25 प्रतिशत घोल (2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए। इस छिड़काव के 10 दिन के अन्तराल पर दूसरा छिड़काव रिडोमिल एमजेड/करजेट एम 8/सेक्टिंन 60 डब्ल्यू.पी. में से किसी एक दवा का 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। अगर आवश्यक हो तो तीसरा छिड़काव 0.25 प्रशित मैनकोजेब का दूसरे छिड़काव के 12–15 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए।

(3) काली रूसी व सामान्य धब्बा

इस रोग का कारक राइजेक्टोनिया सोलेनाई नामक फफूँद है। इस रोग से ग्रसित कन्दों की सतह पर गहरे भूरे से काले रंग वाले असमान व पेचदार पिण्ड बन जाते हैं। ये अनियमित पिण्ड धोने से आसानी से नहीं छूटते। पिण्ड पर खुरदुरी निशान वाली फुन्सियाँ बनकर 3–4 मिमी के गहरे गढ्ढे बना देती है। इन दोनों रोगों के नियंत्रण हेतु आलू के बीज को 3 प्रतिशत बोरिक एसिड के घोल में 20–30 मिनट तक भिगोना चाहिए अथवा इसी घोल का छिड़काव कन्दों पर कर देना चाहिए।

(4) पत्तीनुमा रोग

इस रोग का कारक फ्लोयम निकरोसिस नामक विषाणु है। इस रोग से ग्रसित पौधे की पत्तियाँ चमड़े की तरह कड़ी हो जाती है तथा पौधे बौने रह जाते हैं। निचली पत्तियाँ ऊपर की तरफ मुड़नी शुरू हो जाती हैं और बाद में पीली पड़कर भूरी हो जाती हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए सदैव रोगमुक्त स्वस्थ बीज आलू का ही प्रयोग करें। रोगी पौधे को जड़ कन्दों सहित निकाल कर नष्ट करें।

(5) चित्ती रोग

इस क्षेत्र में मुख्यतः मृदु चित्ती एवं भीषण चित्ती रोग आते हैं मृदु चित्ती पी.वी.ए. विषाणु से एवं भीषण चित्ती पी.वी.वाई., पी.वी.एक्स. आदि विषाणुओं से फैलती है। इस रोग का लक्षण नई पत्तियों पर दिखाई देता है। मृदु व उग्र चित्ती में केवल नई पत्ती या ऊपरी पत्तियों पर अनियमित, साधारण हरे व हल्की पीली चित्ती दिखती है। कम ठण्डे व मन्द मौसम में चित्ती रोग काफी उग्र होता है, जिसके कारण पत्तियों पर झुर्रियों के साथ–साथ अन्तर सिराओं में पीलापन आ जाता है। इसके नियंत्रण के लिए 3 प्रतिशत ट्राइसोडियम फास्फेट या 1 प्रतिशत कैल्शियम हाइपोक्लोराइट के घोल में 10 मिनट तक डुबोकर धोने के बाद बीज आलू के खेतों में उपयोग करें।

प्रमुख कीट

(1) माहू या चेपा कीट

माइजस पर सिकी व एफिस गासिपी नामक माहू आलू के फसल पर वैसे तो कीट–मकोड़ों की तरह नुकसान नहीं करते लेकिन यह रोगमुक्त बीज उत्पादन पर रोक लगाने में अहम भूमिका निभाते हैं। क्योंकि पत्ती मोड़क

(शेष पृष्ठ 11 पर)

दलहनी फसलों का उत्तर जैव उर्वरक-राइजोबियम कल्चर

डॉ. राम प्रताप सिंह*

दलहनी फसलों में जैव उर्वरक का प्रयोग करने से पौधों को वायुमण्डल में मौजूद नत्रजन अमोनिया के रूप में सुगमता से उपलब्ध हो जाती है। साथ ही भूमि में पहले से मौजूद अघुलनशील फास्फोरस आदि तत्व घुलनशील हो जाते हैं और पौधों को आसानी से उपलब्ध होने लगते हैं। चूँकि जीवाणु होते हैं प्रकृतिक, इस लिए इनके प्रयोग से भूमि की उर्वराशक्ति तो बढ़ती ही है, साथ ही पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव भी नहीं पड़ता। विशेषज्ञ सलाह देते हैं कि रसायनिक उवर्रकों के पूरक के रूप में जैव उर्वरकों का प्रयोग कर हम फसल उत्पादन में बेहतर परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। फलीदार पौधों की जड़ों की ग्रन्थिकाओं में राइजोबियम नामक जीवाणु पाया जाता है, जो वायुमण्डल नत्रजन का स्थिरीकरण कर फसल की पैदावार बढ़ाने में सहायक होता है। दूसरे शब्दों में राइजोबियम कल्चर दलहनी फसलों में प्रयोग होने वाला एक जैव उर्वरक है। इसकी विभिन्न प्रजातियाँ अलग–अलग दलहनी फसलों में प्रयोग की जाती हैं, जैसे राइजोबियम मेलीलोटी (मेथी), राइजोबियम ट्राइफोली (बरसीम), राइजोबियम लेग्यूमिनासेरम (मटर, मसूर), राइजोबियम फेसीयोली (सेम), राइजोबियम जोपोनिकम (अरहर, लोबिया, मूँगफली, सोयाबीन)।

राइजोबियम कल्चर का प्रयोग व विधि

राइजोबियम का प्रयोग बीज का उपचार करने में तथा बुवाई पूर्व गोबर की खाद के साथ मिलाकर किया जाता है। बीजोपचार हेतु 01 पैकेट यानी 200 ग्राम राइजोबियम प्रति 10 किग्रा बीज की दर से प्रयोग करें। उपचार के लिए 1/2 लीटर पानी में 50 ग्राम गुड़ डालकर गरम करके घोल बनायें और ठंडा होने पर इसमें 01 पैकेट राइजोबियम कल्चर मिलायें। घोल को धीरे–धीरे लकड़ी के डंडे से क्लाक एवं एन्टी क्लाक वाइज हिलाते रहें। अब इस कल्चर युक्त घोल को 10 किग्रा बीज पर धीरे–धीरे छिड़ककर एवं दोनों हाथों में दस्ताना पहनकर इस तरह मिलायें कि सभी बीज पर समान रूप से एक परत के रूप में चिपक जायें। इसके बाद बीज को छायादार जगह पर सुखायें, फिर बुवाई सुबह या शाम में करें। मृदा उपचार के लिए बुवाई पूर्व 10 पैकेट अथवा 2 किग्रा राइजोबियम प्रति हेक्टेयर की दर से 25 किग्रा गोबर की सड़ी व भुरभुरी खाद तथा 25 किग्रा नमीयुक्त भुरभुरी मिट्टी के साथ मिलकर प्रयोग करें।

राइजोबियम कल्चर से लाभ

राइजोबियम जीवाणु वातावरण में व्याप्त नत्रजन को स्थिरीकरण कर पौधों की जड़ों तक पहुँचाते हैं। इसलिए दलहनी फसलों में रसायनिक खाद की कम जरूरत होती है। राइजोबियम के प्रयोग से भूमि में नत्रजन की मात्रा बढ़ जाती है तथा उर्वरा बनी रहती है। दलहनों की जड़ों में मौजूद जीवाणुओं द्वारा संचित नत्रजन अगली फसल द्वारा ग्रहण की जाती है।

राइजोबियम कल्चर प्रयोग करने में सावधानियाँ

- कल्चर क्रय करते समय यह ध्यान देना चाहिए कि कहीं धूप या खुले स्थान पर एवं किसी रसायनिक उर्वरक के बोरियों के पास तो नहीं रखा है। यदि ऐसा है तो वहाँ से न लें।
- प्रत्येक दलहन को उसके विशेष कल्चर से ही उपचारित करें।
- पैकेट पर लिखी अन्तिम तिथि के पूर्व कल्चर का प्रयोग करें।
- बीज उपचार की तैयारी करने के बाद अन्त में

*सस्य वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान विभाग), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या–224229

राइजोबियम कल्चर का पैकेट खोलें।

- उपचार के तुरन्त बाद बीज बो दें या फिर कुछ समय के लिए इसे छायादार जगर पर सुखायें, फिर बुवाई करें।
- यदि बीजों को कीटनाशक व फफूँदनाशक रसायनों से उपचारित करना हो तो क्रमशः फफूँदनाशक, कीटनाशक और अन्त में चार दिन के अन्तराल पर राइजोबियम कल्चर से उपचारित करें।
- गुड़ और पानी के गरम घोल के ठंडे होने के बाद धीरे–धीरे कल्चर को डालें।
- बीज उपचार करते समय दास्ताने अवश्य पहनें।●

(पृष्ठ 9 का शेष)

(पी.एल.आर.बी.) व वाई वाइरस (पी.बी.वाई.) के मुख्य वाहकों के रूप में कार्य करते हैं तथा इन वाइरस रोगों से फसल को 40–85 प्रतिशत तक का नुकसान होता है। प्रति 100 यौगिक पत्तियों पर माहू की संख्या 20 से ऊपर नहीं होने देना चाहिए। इसके नियंत्रण के लिए किसी उपयुक्त दैहिक कीटनाशक जैसेः मिथाइल डेमिटान–25 ई.सी. या डाइमिथेएट 25 ई.सी. का 0.03 प्रतिशत घोल 10–15 दिनों के अन्तराल पर छिड़क देना चाहिए।

(2) ट्यूबर मोथ

कीट के लार्वा कन्द मूल में सुराक बना लेते हैं यदि कन्द को मिट्टी में ढका न गया तो फसल को बहुत नुकसान पहुँचाता है। इसके नियंत्रण के लिए 0.07 प्रतिशत इण्डोसल्फान 0.05 प्रतिशत मैलाथियान का छिड़काव करना चाहिए।

आलू की अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए मुख्य बिन्दु

- स्थानीय परिस्थति और जलवायु के अनुसार स्वस्थ, रोग रहित एवं प्रमाणित बीज का ही प्रयोग करें।
- बीज शोधित करके ही बोयें।
- मृदा परीक्षण के आधार पर खाद एवं उर्वरक दें।
- हरी खाद/जैविक खाद/गोबर खाद का प्रयोग करें।
- खरपतवार प्रबंधन/रोग प्रबंधन/सिंचाई प्रबंधन का उपयोग वैज्ञानिक विधि से करें।
- आलू छटाई, बिनाई आकार के अनुसार छाँटकर भण्डारित करें।
- आलू को खुदाई के बाद छाया में जरूर रखें।
- खुदाई के तुरन्त बाद भण्डारित न करें।
- 33 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक तापमान होने पर आलू की खुदाई करने पर भण्डारण में सड़ने की संभावना बढ़ जाती है।●

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये

- फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, मत्स्य तथा पशुपालन विषय की वैज्ञानिक जानकारी देने वाली लोकप्रिय मासिक पत्रिका पूर्वाञ्चल खेती। चाहे प्रगतिशील किसान हों, बागवान हों या मत्स्य/पशुपालक, अनुसंधान/प्रसार कार्यकर्ता अथवा कृषि संकाय के छात्र तथा साथ ही साथ सभी के लिये उपयोगी आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, की हिन्दी मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती।
- पूर्वाञ्चल खेती की सदस्यता शुल्क रू0 270.00 मात्र (किसानों, छात्रों एवं लेखकों के लिए रू0 220.00 मात्र) है। जो निदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या को मनीआर्डर/नकद भुगतान द्वारा प्रेषित किया जाना चाहिए। सदस्यता शुल्क भेजते समय अपना नाम व पता स्पष्ट अक्षरों में लिखना न भूलें। आपका सुझाव उत्तरोत्तर सुधार हेतु प्रार्थनीय है।

फसल अवशेष जलाने से नष्ट होती है भूमि की उर्वराशक्ति

डॉ. एल.सी. वर्मा*, डॉ. पी.के. मिश्रा*, डॉ. एस.एन. सिंह* एवं डॉ. प्रदीप कुमार*

भारत में पहले खेती केवल जीविकोपार्जन के लिए की जाती थी लेकिन धीरे–धीरे खेती ने व्यवसाय का रूप ले लिया है। किसान अधिक उपज प्राप्त करने के लिए अन्धाधुन्ध रसायनिक उर्वरक, कीटनाशकों का प्रयोग कर रहा है जिससे मृदा के साथ–साथ पर्यावरण पर भी हानिकारक प्रभाव हो रहा है। फसल अवशेष को जलाना भी एक पर्यावरण तथा मृदा प्रदूषण का महत्वपूर्ण कारण है। पौधों को पोषक तत्वों की आवश्यता होती है, जिसमे कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन प्रकृति से प्राप्त होता है ये तत्व पौधों के लगभग 95 प्रतिशत भाग के निर्माण में सहायक होते हैं। उक्त के अतिरिक्त नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर तथा सूक्ष्म पोषक तत्व के रूप में लोहा, जिंक, आयरन, बोरान, मालिब्डेनम, कापर क्लोरीन तथा निकिल तत्व पौधों के बढ़वार एवं उत्पादन में आवश्यक होते हैं।

उक्त से स्पष्ट है कि पौधों के विभिन्न अंगों (जड़, तना, फूल, फल, दाना आदि) के बढ़ने हेतु उक्त पोषक तत्व पौधों के जड़ों, पत्तियों, तनों द्वारा मृदा से अथवा वातावरण से ग्रहण करते हैं। जब किसान खरीफ, रबी और जायद की फसलों की कटाई–मड़ाई करते हैं तो जड़, तना, पत्तियों के रूपों में पादप अवशेष भूमि के अन्दर एवं भूमि के ऊपर उपलब्ध होते हैं।

पिछले कुछ वर्षों में एक समस्या मुख्य रूप से देखी जा रही है कि जहाँ हार्वेस्टर के द्वारा फसलों की कटाई की जाती है उन क्षेत्रों में फसल के तने के अधिकतर भाग खेत में खड़े रह जाते हैं तथा वहाँ के किसान खेत में फसल के अवशेषों को आग लगाकर जला देते हैं।

क्या है फसल अवशेष

फसल अवशेष पौधे का वह भाग होता है जो फसल की कटाई और मड़ाई के बाद खेत में छोड़ दिया जाता है। भूसा, तना, डंठल, पत्ते व छिलके आदि फसल अवशेष कहलाते हैं। सरसों, गेहूँ, धान, ज्वार, मूँग, बाजरा, गन्ना व अन्य दूसरी फसलों से काफी मात्रा में फसल अवशेष मिलते हैं। सबसे ज्यादा फसल अवशेष अनाज वाली फसलों में तथा सबसे कम अवशेष दलहनी फसलों में मिलते हैं।

खरीफ सीजन में 500 लाख टन फसल अवशेष का उत्पादन होता है। फसल के अवशेषों का सिर्फ 22 प्रतिशत ही इस्तेमाल होता है। फसलों की कटाई के मौसम में फसल अवशेषों को जलाने तथा इसके मानव स्वास्थ्य पर हो रहे दुष्प्रभाव की खबरें प्रायः अख़बारों की सुर्खियाँ बनी रहती हैं। वास्तव में ये एक गंभीर समस्या है इसके लिए बहुत हद तक खेती की परम्परागत शैली जिम्मेदार है। आपको इसको देखना है तो पंजाब के गाँवों की ओर रूख करना होगा जहाँ पर फसल की कटाई के बाद बचे अवशेष जलाने से हवा में लगातार जहर घुल रहा है।

इससे न केवल राज्य के वातावरण में प्रदूषण के स्तर में इजाफा होता है बल्कि स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। वर्ष 2014 और 2016 में फसल अवशेषों को हरियाणा तथा पंजाब में जलाने से दिल्ली को प्रदूषण का सामना करना पड़ा था। वह किसी से अछूता नहीं है। चारो तरफ धुएँ के कारण घर से बाहर निकलना भी दूभर हो गया था। पंजाब के ज्यादातर गाँवों में चाहे वह गेहूँ या धान की फसल हो, कटाई के अन्त में पूरे क्षेत्र में धुएँ की चादर फैल जाती है। चारों ओर जहर घोलता धुएँ का साम्राज्य होता है।

इन स्थानों पर किसान अगली फसल के लिए खेत को तैयार करने से पहले अवाँछित पौधे के अवशेषों से

*के.वी.के. सिद्धार्थनगर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या–224229

छुटकारा पाने के लिए खेत में मौजूद फसल की खूँटी जलाने का विकल्प चुनते रहे हैं। इस पर ज्यादातर किसान कहते हैं कि ये प्रक्रिया एक मात्र व्यवहारिक विकल्प है क्योंकि मशीनों का इस्तेमाल करते हुए वैज्ञानिक तरीके से बची हुई फसल की खूँटी अवशेषों का प्रबन्धन करना बहुत महँगा है।

फसल अवशेषों को खेत में जलाने से खेत पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव

- प्रति एकड़ 400 किग्रा लाभकारी कार्बन जलकर नष्ट हो जाता है।
- नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश व सल्फर के रूप में अति उपयोगी पोषक तत्व जलकर नष्ट हो जाते हैं।
- प्रति ग्राम मिट्टी में उपलब्ध 10–40 करोड़ लाभकारी बैक्टीरिया, 1–2 लाख लाभकारी फफूँद नष्ट हो जाते हैं।
- प्रति एकड़ 18 कुन्तल चारा भूसा जलकर नष्ट हो जाता है, जिसकी कीमत वर्तमान में लगभग रूपये 25000 होगी।
- जब खेत में आग लगाई जाती है तो खेत की मिट्टी उसी प्रकार जलती है जैसे ईंट भट्टे की ईंट जलती है। खेत का तापमान बढ़ने से उसमें पाये जाने वाले लाभकारी जीव जैसे जैविक फर्टिलाइजर– राइजोबियम, अजोटोबैक्टर, एजोस्पाइरिलम, ब्लू ग्रीन एल्गी तथा पी.एस.बी. जीवाणु जो भूमि में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते हैं सब जलकर नष्ट जाते हैं। इसके अतिरिक्त लाभदायक जैविक फफूँदनाशी –ट्राइकोडर्मा, जैविक कीटनाशी– विबैरिया बैसियाना, वैसिलस थिरूनजनेसिस तथा किसान का मित्र कहा जाने वाला केंचुआ आग की लपटों से जलकर नष्ट हो जाते हैं। फसल अवशेष को जलाने से निम्नलिखित दुष्प्रभाव पड़ते हैं।

(1) फसल अवशेष जलाने से बढ़ रहा है ग्लोबल वार्मिंग

अवशेषों को जलाने से ग्लोबल वार्मिंग के खतरे को बल मिलता है।

(2) ग्रीन हाउस प्रभाव

फसल अवशेष जलाने से ग्रीन हाउस प्रभाव पैदा करने वाली व अन्य हानिकारक गैसों मीथेन, कार्बन मोनोऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड और नाइट्रोजन के अन्य ऑक्साइड का उत्सर्जन होता है। इससे पर्यावरण प्रदूषित होता है तथा इसका प्रभाव मानव और पशुओं के अलावा मिट्टी के स्वास्थ्य पर भी पड़ता है।

(3) मृदा के भौतिक गुणों पर प्रभाव

फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा ताप में वृद्धि होती है, जिसके फलस्वरूप मृदा सतह सख्त हो जाती है एवं मृदा की सघनता में वृद्धि होती है। साथ ही मृदा जल धारण क्षमता में कमी आती है तथा मृदा में वायु संरक्षण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

(4) मृदा पर्यावरण पर प्रभाव

फसल अवशेषों को जलाने से मृदा में उपस्थित सूक्ष्म जीवों की संख्या पर बुरा प्रभाव पड़ता है और फसल अवशेष जलाये जाने से मिट्टी की सर्वाधिक सक्रिय 15 सेमी तक की परत में सभी प्रकार के लाभदायक सूक्ष्म जीवों का नाश हो जाता है। फसल अपशिष्ट जलाने से केंचुए, मकड़ी जैसे मित्र कीटों की संख्या कम हो जाती है। इससे हानिकारक कीटोंनाशकों का इस्तेमाल करना आवश्यक हो जाता है। इससे खेती की लागत बढ़ जाती है।

(5) मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों की कमी

फसल अवशेषों को जलाने के कारण मिट्टी में पाये जाने वाले पोषक तत्व जैसे नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश एवं सल्फर नष्ट हो जाते हैं। इससे मिट्टी की उर्वराशक्ति कम हो जाती है। एक टन धान के पुआल

को जलाने से 5.5 किग्रा नाइट्रोजन, 2.3 किग्रा फास्फोरस, 25 किग्रा पोटैशियम तथा 1.2 किग्रा सल्फर नष्ट हो जाता है।

(6) जानवरों के लिए चारे की कमी

फसल अवशेषों को पशु के लिए सूखे चारे के रूप में प्रयोग किया जाता है अतः फसल अवशेषों को जलाने से पशुओं को चारे की कमी का सामना करना पड़ता है।

(7) अग्निकाण्ड होने की संभावना

जहाँ पर कम्बाइन का प्रयोग फसलों के कटाई में करते हैं वहाँ पर फसलों के अवशेष डण्ठल के रूप में खड़े हाते हैं एवं उनके जलाने पर नजदीक के किसानों के फसलों में आग लगने की संभावना बनी रहती है जिससे खड़ी फसल एवं आबादी में अग्निकाण्ड होने की संभावना बनी रहती है, वहीं आस–पास के खेत व खलिहान तथा मकान में भी अग्निकाण्ड के कारण अत्यधित नुकसान उठाना पड़ता है।

फसल अवशेषों को खेत की मिट्टी में मिलाने से लाभ

फसल अवशेषों को यदि 20 किग्रा यूरिया प्रति एकड़ की दर से मिट्टी पलटने वाले हल/रोटावेटर से जुताई के समय मिला देने से पादप अवशेष लगभग 20 से 30 दिन के भीतर जमीन में सड़ जाते हैं। फलस्वरूप फसलों के उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। यदि भूमि में उक्त विधि से पादप अवशेष मिलाते हैं तो निम्नलिखित लाभ होते हैं।

कार्बनिक पदार्थ की उपलब्धता में वृद्धि

कार्बनिक पदार्थ ही एकमात्र ऐसा स्रोत है जिसके द्वारा मृदा में उपस्थित विभिन्न पोषक तत्व फसलों को उपलब्ध हो पाते हैं तथा कम्बाइन द्वारा कटाई किए गए प्रक्षेत्र उत्पादित अनाज की तुलना में लगभग 1.29 गुना अन्य फसल अवशेष होते हैं। ये खेत में सड़कर मृदा कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि करते हैं। जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ती है पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि, फसल अवशेष से बने खाद में पोषक तत्वों का भण्डारण होता है। फसल अवशेषों में लगभग सभी आवश्यक पोषक तत्वों के साथ 0.45 प्रतिशत नाइट्रोजन की मात्रा पायी जाती है जो कि एक प्रमुख तत्व है।

मृदा के भौतिक गुणों में सुधार

मृदा में फसल अवशेषों को मिलाने से मृदा की परत में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ने से मृदा सतह की कठोरता कम होती है तथा जल धारण क्षमता एवं मृदा में वायु संचारण में वृद्धि होती है। भूमि से पानी के भाप बनकर उड़ने में कमी आती है।

मृदा की उर्वरा शक्ति में सुधार

फसल अवशेष को मृदा में मिलाने से मृदा के रसायनिक गुण जैसे उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा, मृदा की विद्युत चालकता एवं मृदा पीएच में सुधार होता है तथा फसल को पोषक तत्व अधिक मात्रा में मिलते हैं।

मृदा तापमान

फसल अवशेष भूमि के तापमान को बनाये रखते हैं। गर्मियों में छायांकन प्रभाव के कारण तापमान कम होता है तथा सर्दियों में गर्मी का प्रवाह ऊपर की तरफ कम होता है जिससे तापमान बढ़ता है।

फसल उत्पादकता में वृद्धि

भूमि में खरपतवारों के अंकुरण व बढ़वार में कमी होती है। फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने पर आने वाली फसलों की उत्पादकता में भी काफी मात्रा में वृद्धि होती है।

खेत के अन्दर सस्यावशेष प्रबन्धन

फसल की कटाई के बाद खेत मे बचे अवशेष घास, फूस, पत्तियाँ व ठूँठ आदि को सड़ाने के लिए किसान भाई फसल को काटने के पश्चात 20–25 किग्रा

(शेष पृष्ठ 18 पर)

आय सम्वर्धन हेतु फल एवं सब्जी उत्पादन की नवीनतम तकनीकियाँ

डॉ. एस.पी. सिंह*, डॉ. एस.के. तोमर* एवं डॉ. एस.के. सिंह*

(1) मचान (बावर) विधि द्वारा लतावर्गीय सब्जियों की अन्तः फसली खेती से आय सम्वर्धन

सारिणी–1

मचान विधि से सब्जियों की अन्तः फसली खेती

फसल	प्रजातियाँ	अवधि (बुवाई से कटाई तक)
करेला	प्राची, रॉकर	मार्च से सितम्बर
नेनुआ (तोरई)	एस–16, व्हाइट सीडेड	जुलाई से अक्टूबर
लौकी	नरेन्द्र शिवानी, अनोखी, माही गोल्ड	सितम्बर से दिसम्बर

- एक एकड़ क्षेत्रफल में मचान के लिए 8 फुट लंबाई के 600 बाँस, 20 किग्रा रेशम धागा, 20 किग्रा पतला तार, 10 किग्रा पतली रस्सी की आवश्यकता।
- मचान बनाने के लिए 10 गुणा 10 फुट की दूरी पर बाँस गाड़ें।
- करेले की बुवाई मार्च में बाँस के पास थाला बनाकर करते हैं, जिसमें फलत सितम्बर तक प्राप्त होती है।
- नेनुआ की बुवाई जुलाई माह में अलग थाला में करें जिससे करेला की फसल समाप्त होने तक नेनुआ मचान पर आ जाये।
- लौकी की बुवाई सितम्बर माह में करें जिससे नेनुआ खत्म होने से पहले लौकी मचान पर आ जाये।

सारिणी–2

आय व्यय का विवरण

फसल	लागत (रू)	उत्पादन (कु)	दर (रू./कु)	शुद्ध लाभ (रू)
करेला	51,200	205	1500	2,56,300
नेनुआ	28,750	121	1000	92,250
लौकी	47,800	510	600	2,58,200
मचान	61,300	–	–	–
कुल	**1,89,050**			**5,45,450**

लाभ

- धान, गेहूँ की शुद्ध आय से 10 गुना ज्यादा आय।
- मचान तीनों फसलों के काम आता है अतः खर्च में बचत
- बाँस 3 वर्ष तक उपयोगी।

सारिणी–3

फूलगोभी, आलू व लौकी की रिले क्रॉपिंग

फसल	प्रजातियाँ	अवधि (बुवाई से कटाई तक)
अगेती फूलगोभी	सबौर अग्रिम, गिरजा	मध्य जून से मध्य अक्टूबर
आलू	कुफरी अरूण, कुफरी पुखराज	अक्टूबर से मध्य फरवरी
लौकी	सस्ति, नरेन्द्र, रश्मि, अनोखी	जनवरी के दूसरे पखवाड़े से मध्य मई

- फूलगोभी की नर्सरी मध्य जून को बीज बुवाई कर मध्य जुलाई तक पौध रोपण कर दें।
- आलू की बुवाई मध्य अक्टूबर में 50 x 20 सेमी की दूरी पर करें।

*कृषि विज्ञान केन्द्र बेलीपार, गोरखपुर

- लौकी के बीजों की बुवाई दिसम्बर माह में पॉलीबैग में करके लो–टनल में रखें।
- जनवरी के दूसरे पखवाड़े में 10–10 फुट की दूरी पर लाइन से आलू की खुदाई कर 5 फुट की दूरी पर नाली में लौकी की रोपाई करें।

सारिणी–4
आय व्यय का विवरण

फसल	लागत (रू)	उत्पादन (कु)	दर (रू./कु)	शुद्ध लाभ (रू)
अगेती फूलगोभी	20,250	82	2000	1,41,750
आलू	34,820	110	1000	75,180
लौकी	25,100	305	1000	2,79,990
कुल	**80,170**	–	–	**4,98,830**

लाभ

- फूलगोभी, आलू व लौकी की रिले क्रॉपिंग से शुद्ध आय में रूपये 2,79,900 की अतिरिक्त वृद्धि होती है।
- पोषक तत्वों का समुचित उपयोग हो जाता है।
- फसल सघनता में वृद्धि होती है।

(3) प्याज (सागा) व नेनुआ की सह–फसली खेती से आय सम्वर्धन

सारिणी–5
प्याज व नेनुआ की सहफसली खेती

फसल	प्रजातियाँ	अवधि (बुवाई से कटाई तक)
प्याज (सागा)	एग्रीफाउण्ड डार्क रेड, एन–53	दिसम्बर के प्रथम सप्ताह से मार्च
नेनुआ	एस–16, व्हाइट सीडेड, माया	जनवरी के अन्तिम सप्ताह से अगस्त

- प्याज की रोपाई दिसम्बर माह में करने के लिए नर्सरी मध्य अक्टूबर में बुवाई करें।
- प्याज की रोपाई 10 फुट चौड़ाई की क्यारियाँ बनाकर 10 x 15 सेमी पर करें।
- नेनुआ के बीजों की बुवाई दिसम्बर माह में पॉलीबैग में करके लो–टनल में रखें।
- नेनुआ की रोपाई प्याज की दो क्यारियों के बीच नाली में 3 फुट की दूरी पर करें।

सारिणी–6
आय व्यय का विवरण

फसल	लागत (रू)	उत्पादन (कु)	दर (रू./कु)	शुद्ध लाभ (रू)
प्याज (सागा)	35,270	406	1000	3,70,730
नेनुआ	28,150	103	1000	74,850
कुल	**63,420**	–	–	**4,45,580**

लाभ

- सागा प्याज की खेती से बल्व वाली प्याज की तुलना में शुद्ध आय में 2 गुना वृद्धि।
- सागा प्याज के साथ नेनुआ की सहफसली खेती से 74,850 रूपये की अतिरिक्त आय।

(4) केला व फूलगोभी की सहफसली खेती से आय सम्वर्धन

सारिणी–7

केला व फूलगोभी की सहफसली खेती

फसल	प्रजातियाँ	अवधि (बुवाई से कटाई तक)
केला	ग्रेण्ड नैन (जी–9)	जुलाई के प्रथम सप्ताह से नवम्बर तक
फूलगोभी	गिरजा, माधुरी	अक्टूबर के प्रथम सप्ताह से दिसम्बर तक

- केला की रोपाई जुलाई माह में 5 x 6 फुट की दूरी पर करें।
- केला रोपण के सातवें एवं बीसवें दिन पर एनपीके (18:18:18) घुलनशील उर्वरकों का 1 प्रतिशत घोल बना कर छिड़काव करें।
- फूलगोभी की नर्सरी सितम्बर माह में तैयार कर अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक केला की पंक्तियों के बीच 30 x 45 सेमी की दूरी पर रोपड़ करते हैं।
- केला की 2 पंक्तियों के बीच में फूलगोभी की 2 पंक्तियों की रोपाई करें

सारिणी–8

आय व्यय का विवरण

फसल	लागत (रू)	उत्पादन (कु)	दर (रू./कु)	शुद्ध लाभ (रू)
केला	1,00,000	400	10	3,00,000
फूलगोभी	10,000	90	6	44,000
कुल	**1,10,000**	–	–	**3,44,000**

लाभ

- केला व फूलगोभी के सह फसली खेती से शुद्ध आय में रूपये 44,000 प्रति एकड़ की अतिरिक्त वृद्धि होती है।
- खरपतवार के नियंत्रण पर अतिरिक्त व्यय में बचत।

(5) पपीता व फूलगोभी की सहफसली खेती से आय सम्वर्धन

सारिणी–9

पपीता व फूलगोभी की सहफसली खेती

फसल	प्रजातियाँ	अवधि (बुवाई से कटाई तक)
पपीता	रेड लेडी–786, पूसा नन्हा, राँची डवार्फ	अक्टूबर से नवम्बर
फूलगोभी	गिरजा, माधुरी	अक्टूबर के प्रथम सप्ताह से दिसम्बर तक

- पपीता की बुवाई सितम्बर माह में पाली बैग में कर पौधे अक्टूबर माह में रोपाई हेतु तैयार कर लेते हैं।
- एक एकड़ क्षेत्र में पपीता के पौधे 2 x 2 मीटर की दूरी पर रोपने पर 1000 पौधों की आवश्यकता होगी।
- फूलगोभी की नर्सरी सितम्बर माह में तैयार कर पपीता के दो पंक्तियों के बीच में 2 लाइन फूलगोभी, 30 x 45 की दूरी पर अक्टूबर माह में रोपाई कर दें। पपीता की 2 पंक्तियों के बीच में फूलगोभी की 2 पंक्तियों की रोपाई करें।

सारिणी–10
आय व्यय का विवरण

फसल	लागत (रू)	उत्पादन (कु)	दर (रू./कु)	शुद्ध लाभ (रू)
पपीता	45,625	312	1100	2,97,575
फूलगोभी	10,250	84	600	40,150
कुल	**55,875**	–	–	**3,37,725**

लाभ

- पपीता व फूलगोभी के सहफसली खेती से शुद्ध आय में रूपये 40,150 प्रति एकड़ की अतिरिक्त वृद्धि होती है।
- खरपतवार के नियंत्रण पर अतिरिक्त व्यय में बचत।●

(पृष्ठ 14 का शेष)

नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़क कर कल्टीवेटर या रोटावेटर से काटकर मिट्टी में मिला देना चाहिए इस प्रकार अवशेष खेत में विघटित होना प्रारम्भ कर देंगे तथा लगभग एक माह में स्वयं सड़कर आगे बोई जाने वाली फसल को पोषक तत्व प्रदान कर देंगे क्योंकि कटाई के पश्चात दी गई नाइट्रोजन अवशेषों में सड़न की क्रिया को तेज कर देती है। अगर फसल अवशेष खेत में ही पड़े रहें तो फसल बोने पर जब नई फसल के पौधे छोटे रहते हैं तो वह पीले पड़ जाते हैं क्योंकि उस समय अवशेष के सड़ाव में जीवाणु भूमि की नाइट्रोजन का उपयोग कर लेते हैं जिस कारण प्रारम्भ में फसल पीली पड़ जाती है। अतः फसल अवशेष का प्रबन्धन करना अत्यन्त आवश्यक है तभी हम अपनी जमीन में जीवांश पदार्थ की मात्रा में वृद्धि कर जमीन को खेती योग्य सुरक्षित रख सकते हैं।

सारिणी–1
फसल अवशेष में पाये जाने वाले पोषक तत्व

फसल अवशेष	नत्रजन प्रतिशत	फास्फोरस प्रतिशत	पोटाश प्रतिशत
गेहूँ का भूसा	0.53	0.10	1.10
जौ का भूसा	0.57	0.26	1.12
गन्ने की पत्ती	0.35	0.10	0.60
गन्ने की खोई	2.25	0.12	–
धान का पुआल	0.36	0.08	0.70
राई/सरसों का तना	0.57	0.28	1.40
मक्की कड़की	0.47	0.57	1.65
बाजरे की कड़की	0.65	0.75	2.50
धान की भूसी	0.40	0.25	0.40
मूँगफली का छिलका	0.70	0.48	1.40
आलू पत्तियाँ	0.52	0.09	0.85
मटर की सूखी पत्तियाँ	0.35	0.12	0.36
क्रंज की सूखी पत्तियाँ	2.65	0.41	2.42
वृक्षों की सूखी पत्तियाँ	1.50	0.45	2.50

निष्कर्ष

अतः प्रदेश के कृषकों से अनुरोध है कि किसी भी फसल के अवशेष को जलायें नहीं बल्कि मृदा में कार्बनिक पदार्थ की वृद्धि हेतु पादप अवशेषों को मृदा में मिलायें/सड़ायें। फसलों की कटाई यदि कम्बाइन मशीन से की जाती है तो किसान भाई रीपर युक्त कम्बाइन मशीन का ही प्रयोग करें।●

ढींगरी मशरूम की खेती एक लाभकारी व्यवसाय

डॉ. प्रदीप कुमार*

आयस्टर मशरूम (प्लूरोटस) को सामान्यतः भारत में ढींगरी मशरूम कहते हैं। ढींगरी खुम्ब शरद व ग्रीष्म ऋतुओं में उगाया जा सकता है। पौष्टिकता की दृष्टि से श्वेत बटन मशरूम की भाँति ढींगरी खुम्ब में भी उच्च कोटि की प्रोटीन, प्रचुर मात्रा में खनिज लवण, खाद्य रेशा एवं विटामिन पाये जाते हैं। आवश्यक अमीनो की संतुलित मात्रा, नगण्य कोलेस्ट्राल व क्षारीय प्रकृति के कारण मशरूम को एक उत्तम खाद्य पदार्थ की श्रेणी में रखा जाता है। विटामिन व खनिज लवणों की पर्याप्त मात्रा होती है अतः हृदय रोग, मधुमेह व मोटापे से ग्रस्त व्यक्तियों के लिए उपयुक्त भोजन है। इसकी लगभग 38 स्पीसीज पूरे विश्व में पायी जाती है। प्लोरोट्स ओलेरियस तथा प्लोरोट्स निडिफार्मिस जो कि जहरीली प्रजाति है, के अलावा इसकी अन्य सभी प्रजातियाँ खाने योग्य हैं।

लाभ

(1) इसे कृषि फसलों के अवशेषों पर सीधे उगाया जा सकता है। बटन खुम्ब की भाँति खाद (कम्पोस्ट) बनाने की आवश्यकता नहीं होती है।
(2) इसे विभिन्न तापमान (15–32 डिग्री सेन्टीग्रेड) पर उगा सकते हैं।
(3) इसकी उत्पादन क्षमता अधिक है।
(4) बीमारियों एवं कीटों का प्रकोप अन्य मशरूम की अपेक्षा कम होता है।
(5) इसकी वृद्धि तेजी से होती है, फसल अवधि 45–60 दिन का होता है।
(6) इसकी उत्पादन विधि आसान है तथा उत्पादन लागत कम है।
(7) कटाई उपरान्त प्रोसेसिंग तथा सुखाना (धूप में) आसान है।

कमियाँ

(1) कुछ लोगों को स्पोर एलर्जी होती है।
(2) स्पोरलेस व्यवसायिक स्ट्रेन का अभाव है।
(3) उपभोक्ता द्वारा सीमित माँग के साथ–साथ देश में संगठित बाजार की कमी है।

उगाने हेतु आवश्यक सामग्री

(1) कृषि फसल अवशेष मुख्यतः गेहूँ, पुआल आदि का भूसा।
(2) स्पान (मशरूम बीज)।
(3) पालीथीन बैग (आकार 45 गुणा 30 सेमी, 60 गुणा 45 सेमी)।
(4) टैंक/ड्रम।
(5) फार्मलीन/कार्बेन्डाजिम
(6) उत्पादन कक्ष

उत्पादन रणनीति

ढींगरी खुम्ब खेती को व्यवसायिक स्तर पर चार चरणों में पूरा किया जाता है।
(1) स्पॉन की तैयारी अथवा खरीद।
(2) पोषाधार तैयार करना एवं पोषाधार का पाश्चुराइजेशन
(3) स्पॉनिंग
(4) फसल प्रबंधन

स्पॉन की तैयारी अथवा खरीद

खुम्ब उत्पादन में स्पॉन, बीज की तरह कार्य करता है। स्पॉन बनाने हेतु प्ल्यूरोटस के कल्चर को निर्जीवीकृत गेहूँ, ज्वार, बाजरा, रागी इत्यादि पर विकसित किया जाता है। 10 से 15 दिनों के ऊष्मायन के उपरांत यह स्पॉन बिजाई हेतु तैयार हो जाता है। स्पॉन की खरीद

*सहायक प्राध्यापक, पादप रोग विज्ञान, कृषि ज्ञान केन्द्र, गाजीपुर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या–224229

अपनी खुम्ब इकाई के निकट स्थित स्पॉन उत्पादन करने वाली विभिन्न प्रयोगशालाओं से भी की जा सकती है।

सारिणी–1

ढींगरी मशरूम की विभिन्न प्रजातियों के उगाने हेतु अनुकूल तापमान

प्रजाति	अनुकूल तापमान (डिग्री सेल्सियस)	
	कवक जाल फैलाव हेतु	फलन हेतु
ग्रीष्मकालीन प्रजातियाँ		
प्लोरोट्स फ्लैबिलेट्स	25–30	22–26
फ्लोरिडा, सजोरकाजू	25–30	22–26
प्लोरोट्स सैपिडस	25–30	22–26
शरदकालीन प्रजातियाँ		
प्लोरोट्स फ्लोरिडा	25–30	18–22
प्लोरोट्स फौस्यूलेट्स	18–22	16–20
प्लोरोट्स ऐरिंजाई	18–22	14–18

उत्पादन करने की विधि

(1) प्रजाति का चुनाव

सारिणी–1 के आधार पर अपने क्षेत्र की जलवायु को ध्यान में रखकर प्रजाति का चुनाव करना चाहिए।

(2) पोषाधार (माध्यम) तैयार करना

ढींगरी मशरूम की खेती विभिन्न प्रकार के कृषि अपशिष्ट पर की जा सकती है परन्तु गेहूँ व धान का भूसा ढींगरी की खेती में प्रयोग किये जाने वाले बहुप्रचलित कृषि अवशेष हैं।

ढींगरी की खेती में प्रयोग किये जाने वाले कृषि अवशेषों को हानिकारक सूक्ष्मजीव फफूँद तथा अन्य जीवाणुओं से मुक्त करना पड़ता है, जिसके लिए निम्नानुसार किसी भी विधि द्वारा कृषि अवशेषों (माध्यम) को उपचारित किया जा सकता है।

(क) गर्म पानी उपचार विधि

इस विधि में कृषि अवशेषों (गेहूँ व धान का भूसा) को छिद्रदार जूट के थैले या बोरे में भरकर रात भर साफ पानी में डुबोकर रखा जाता है तथा अगले दिन भीगे भूसे के बोरे को गर्म पानी (गेहूँ का भूसा 65–70 डिग्री सेन्टीग्रेड पर 60–120 मिनट तक तथा धान के भूसे को 85 डिग्री सेन्टीग्रेड पर 30–35 मिनट) में डुबोकर उपचारित किया जाता है। इसके बाद गर्म पानी से भूसे को निकालकर पॉलीथीन सीट पर फैला दें तथा पानी का रिसाव पूरा होने दें। भूसे से पानी निकल जाने (65–70 प्रतिशत नमी) व ठण्डा करने के बाद बीज मिलाया जाता है। यह विधि बृहद स्तर पर व्यवसायिक खेती के लिए उपयुक्त नहीं है।

(ख) रसायनिक उपचार विधि

गेहूँ व पुआल के भूसे का रसायनिक उपचार कार्बेन्डाजिम 50 प्रतिशत डब्ल्यू पी (37.5 पीपीएम) फार्मेल्डिहाइड (500 पीपीएम) के घोल में डुबोकर करते हैं तो इससे अधिकतर प्रतिस्पर्धात्मक फफूँद या तो मर जाती है या उनकी वृद्धि स्पर्निंग के 25–40 दिन तक नहीं होती है फलस्वरूप उपज में वृद्धि होती है। यह तकनीक इस प्रकार है।

(1) एक 200 लीटर क्षमता वाले ड्रम या टब में 90 लीटर पानी लेकर 10–12 किग्रा भूसे को पानी में डुबो दिया जाता है तत्पश्चात एक प्लास्टिक की बाल्टी में कार्बेन्डाजिम 7.5 ग्राम एवं 125 मिली फार्मलीन (37–40 प्रतिशत) को 10 लीटर पानी में मिलाकर घोल को भूसे वाले ड्रम में डाल दिया जाता है तथा ड्रम को पॉलीथीन सीट या ढक्कन से अच्छी तरह बन्द कर दिया जाता है तथा ऊपर से वजन रख देते हैं ताकि भूसा ऊपर न उठे और पानी में डूबा रहे।

(2) लगभग 15–18 घण्टे बाद उपचारित भूसे को ड्रम से बाहर निकालकर प्लास्टिक सीट या पक्के फर्श या छन्ने पर फैला दिया जाता है। 2–4 घण्टे में भूसे से अतिरिक्त पानी निचुड़ जाता है तथा फार्मलीन की गन्ध भी खत्म हो जाएगी। 10–12 किग्रा सूखा भूसा उपचार के बाद 40–45 किग्रा हो जाता है।

अधिक भूसा उपचारित करने के लिए 1000–2000 लीटर क्षमता वाले ड्रम या सीमेन्टेड टैंक का प्रयोग कर सकते हैं तथा गणना करके उसी पानी के अनुपात में रसायन को भी मिलाते हैं।

(3) बीजाई

बीजाई हेतु ताजा तैयार स्पॉन (20–30 दिन पुराना) अच्छा होता है। बीजाई करने से पहले बीजाई कक्ष को 48 घण्टे तक 2 प्रतिशत फार्मलीन के घोल से उपचारित कर लेना चाहिए तथा बीजाई करने वाले श्रमिक भी अपने हाथों को भी साफ करके स्प्रिट लगाकर संक्रमण मुक्त कर लेना चाहिए। स्पॉन (मशरूम बीज) को 10 प्रतिशत सूखे भूसे या 3 प्रतिशत गीले भूसे की दर से पोषाधार में मिलाना चाहिए अर्थात 1 कुन्तल सूखे भूसे के लिए 10 किग्रा स्पान की आवश्यकता होती है। प्रति 4 किग्रा गीले भूसे में 100 ग्राम बीज अच्छी तरह मिलाकर अथवा लेयर विधि से बीजाई करके पॉलीथीन की थैलियों (आकार 45 गुणा 30 सेमी, 60 गुणा 45 सेमी, 125–150 गेज मोटाई की) में भर देना चाहिए। पॉलीथीन के पेंदे में 10–15 (0.5 सेमी से 1.0 सेमी व्यास के) छिद्र बनाकर पॉलीथीन के मुँह को अच्छी तरह से बन्द कर देते हैं, जिससे बैग का तापमान ज्यादा न बढ़ने पाए।

(4) फसल प्रबन्धन

बीजाई करने के पश्चात बीजित बैगों को उत्पादन कक्ष में बनाये गए बहुस्तरीय ढाचों (रैक्स) पर सटाकर बीज फैलाने के लिए रख दिया जाता है। बैगों को उत्पादन कक्ष में रखने के 24 घण्टे पहले कक्ष में 2 प्रतिशत फार्मलीन के घोल का छिड़काव कर उत्पादन कक्ष को ढंग से बन्द कर देते हैं ताकि कक्ष में यदि हानिकारक जीवाणु हों तो नष्ट हो जाये। बीज फैलते समय पानी, हवा या प्रकाश की आवश्यकता नही होती। कवक जाल (माईसीलियम) फैलाव के लिए कमरे का तापमान सारिणी में दी गयी विभिन्न प्रजातियों के लिए आवश्यक तापमान के आवश्यकतानुसार बनाए रखा जाता है। यदि बैग तथा कमरे का तापमान इससे ज्यादा बढ़ने लगे तो कमरे की दीवारों तथा छत पर पानी का छिड़काव 2–3 बार करें या एयर कूलर चला दें। लगभग 20–25 दिनों में मशरूम का कवक जाल भूसे की पूरी परत को ढक लेता है जिससे बैग बिलकुल सफेद दिखाई देने लगता है, तब पॉलीथीन को काटकर हटा देना चाहिए तथा इन्हे बहुस्तारी ढाँचों पर एक दूसरे से 15–20 सेमी की दूरी पर रख देते हैं। पॉलीथीन हटाने के बाद फलन के लिए कमरे में तथा बैगों पर दिन में 2–3 बार महीन नोजल से पानी का छिड़काव करना चाहिए। कमरे में आवश्यक नमी 75–85 प्रतिशत एवं आवश्यक तापमान (सारिणीनुसार) बनाए रखना चाहिए। कमरे में स्वच्छ हवा प्रवेश कराना चाहिए इसके लिए कुछ समय के लिए खिड़कियाँ खोल देना चाहिए या एग्जास्ट पँखों को चलाना चाहिए। ढींगरी मशरूम उत्पादन में नमी व तापमान के अतिरिक्त प्रकाश का भी बहुत महत्व है। अंधेरा होने पर कलिकाओं का विकास नहीं हो पाता है अतः कमरे में लगभग 6–8 घंटे तक प्रकाश देना चाहिए। बैगों को खोलने के बाद उपरोक्त स्थिति बनाए रखने के पर लगभग एक सप्ताह में मशरूम की छोटी–छोटी कलिकायें बनने लगती हैं जो 4–5 दिनों में पूर्ण आकार ले लेती है।

तुड़ाई करना एवं उपज

जब छोटी–छोटी कलिकायें पँख का आकार ग्रहण कर किनारे ऊपर की तरफ मुड़ने लगे तो इन्हें तुड़ाई योग्य समझना चाहिए तथा इन्हें अँगूठे तथा तर्जनी अँगुली की सहायता से घड़ी की दिशा में मरोड़कर तोड़ लेना चाहिए। तुड़ाई हमेशा पानी के छिड़काव से पहले करनी चाहिए। मशरूम तोड़ने के बाद डंठल के साथ

लगे हुए भूसे को चाकू से काटकर हटा देना चाहिए। पहली फसल के 7–8 दिन बाद दूसरी फसल निकलती है तथा इसके उपरान्त बैग से मशरूम का उत्पादन क्रमशः कम होने लगता है। इस तरह से कुल 3–4 फसल की तुड़ाई से लगभग 6 सप्ताह में 10 किग्रा सूखे भूसे से लगभग 7–8 किग्रा मशरूम की पैदावार मिलती है।

(5) भण्डारण व उपयोग

तोड़ने के बाद मशरूम को लगभग 2 घण्टे सूती कपड़े पर फैलाकर छोड़ देना चाहिए जिससे कि उसमें मौजूद नमी उड़ जाए तत्पश्चात पॉलीथीन में बन्द नहीं होना चाहिए। ताजे ढींगरी मशरूम को छिद्रदार पॉलीथीन में भरकर रेफ्रीजरेटर में 2–3 दिन तक रखा जा सकता है। ढींगरी को धूप या ओवेन में सुखाकर अच्छी तरह सीलबन्द करके इस सूखे उत्पाद को 3–4 माह तक भण्डारित किया जा सकता है। ताजे एवं सूखे मशरूम का प्रयोग सब्जी के विभिन्न व्यंजन जैसे ढींगरी मटर, ढींगरी आमलेट इत्यादि बनायी जा सकती है। सूखे हुए मशरूम को पीसकर पाउडर भी बना सकते हैं जिसका प्रयोग विभिन्न प्रकार के मूल्यवर्धित उत्पाद बनाने में किया जा सकता है।

(6) उत्पादन लागत एवं लाभ

उत्पादन : 70–80 किग्रा मशरूम प्रति कुन्तल भूसे से।
उत्पादन लागत : 30–35 रूपये / किग्रा मशरूम।
बिक्री दर : 70–80 रूपये / किग्रा मशरूम।
शुद्ध लाभ : 40–45 रूपये / किग्रा मशरूम।●

संतुलित उर्वरक का प्रयोग

लगातार फसल उगाने से मृदा के स्वास्थ्य में हो रही गिरावट के कारण कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में स्थिरता की स्थिति हो गयी है। समय रहते खेत की मिट्टी की दशा को सुधारने एवं उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग करने के लिए आवश्यक है कि किसान भाई अपने खेत की मिट्टी की जाँच करवाने के पश्चात संस्तुत मात्रा में संतुलित उर्वरक का प्रयोग करें तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड अवश्य बनवायें। फसल अवशेष को न जलाएं उसका प्रबन्ध कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाएं। खेत को खाली न छोड़ें बल्कि हरी खाद हेतु सनई व ढैंचा पलटकर हरी खाद बनायें। जीवांशिक खादों का अधिक से अधिक प्रयोग कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाने पर बल दें।

कृषि लागत कम करने हेतु सुझाव

- ऊसर व बंजर भूमि का उपचार कर कृषि योग्य बनाकर खेती के प्रयोग में लाएं।
- सिंचाई जल उपयोग में बृद्धि हेतु ड्रिप एवं स्प्रिकलर पद्धति पर बढ़ावा देना तथा इसके प्रयोग पर प्रशिक्षण प्रदान कर इसे बढाने तथा क्रान्तिक अवस्थाओं पर उचित मात्रा में सिंचाई करें।
- कृषि लागत में कमी हेतु कृषि यन्त्रीकरण का प्रयोग कर जीरो टिलेज, सीडड्रिल व कम्बाइन हार्वेस्टर के साथ भूसा बनाने वाली मशीन के प्रयोग पर बल दिया जाय।
- मृदा स्वास्थ्य बढानें के लिए जैविक उर्वरक, कार्बनिक खाद, फसल अवशेषों का प्रबन्ध व मृदा स्वास्थ्य कार्ड के अनुसार उर्वरकों के संतुलित प्रयोग पर बल दिया जाना जिससे उत्पादन बढ़नें के साथ लागत में कमी आये।

आँवला फलों का परिरक्षण

शशांक सिंह*, आकांक्षा सिंह** एवं नवीन विक्रम सिंह*

आँवला फल विटामिन सी का सर्वोत्तम और प्राकृतिक स्रोत है। आयुर्वेद में आँवला फल को अत्यधिक स्वास्थ्यवर्धक एवं धातुवर्धक रसायन माना गया है। आँवले के 100 ग्राम रस में 921 और गूदे में 720 मिग्रा विटामिन सी पाया जाता है। आर्द्रता 81.2, प्रोटीन 0.5, वसा 0.1, खनिज द्रव्य 0.7, कार्बोहाइड्रेट्स 14.1, कैल्शियम 0.05, फॉस्फोरस 0.02 प्रतिशत, लौह 1.2 मिग्रा, निकोटिक एसिड 0.2 मिग्रा पाए जाते हैं। इसके अलावा इसमें गैलिक एसिड, टैनिक एसिड, शर्करा (ग्लूकोज), एल्ब्यूमिन आदि तत्व भी पाए जाते हैं।

आँवले को अनेक तरह से स्वास्थ्य के लिए उपयोग किया जाता है और इसका हर तत्व शरीर के लिए लाभदायी रहता है चाहे फिर इसे कैसे भी इस्तेमाल क्यों ना किया जाए। नियमित रूप से आँवले का सेवन करने से युवावस्था बनी रहती है। लेकिन कुछ लोगों को आँवले का रस या कच्चा आँवला खाना पसंद नहीं क्योंकि उसका स्वाद थोड़ा कसैला होता है। लेकिन आँवला फलों के प्रसंस्करण से तैयार उत्पाद का स्वाद सबको पसंद आता है।

आँवले का फल खट्टा होने के कारण ताजे फल के रूप में प्रयोग में नहीं किया जाता है। आँवले में बहुत सारे पोषक व औषधीय गुण विद्यमान हैं, जिनका लाभ आँवले से बहुत सारे संसोधित पदार्थ बनाकर ले सकते हैं। संसोधित पदार्थ बनाने के लिए फलों की अच्छी किस्म का होना बहुत जरूरी है। नरेन्द्र आँवला–6 तथा नरेन्द्र आँवला–7 इस हिसाब से अच्छी किस्में पाई गई हैं, क्योंकि इन किस्मों में रेशें की मात्रा कम होने के साथ–साथ विटामिन सी की मात्रा अधिक होती है। आँवले की ये दोनों किस्में मुरब्बा तथा कैंडी बनाने हेतु उत्तम है। आँवला फलों से तैयार उत्पादों में भी आँवले के सारे गुण सुरक्षित रहते हैं। आँवला सर्दियों के मौसम में किसी भी तरह से खाया जा सकता है, आप चाहें तो सर्दियों के मौसम में आँवला की कैंडी, मुरब्बा, चटनी, च्यवनप्राश, शरबत, चूर्ण बनाकर भी इसका सेवन कर सकते हैं।

फलों से गूदा निकालना

विभिन्न संसाधित पदार्थ बनाने के लिए गूदे की आवश्यकता होती है। गूदा निकालने के लिए फलों को पानी मे करीब 10 मिनट उबालकर गुठली को अलग कर लेते हैं। इसके बाद फाकों को बराबर मात्रा में पानी में मिलाकर गूदा निकालने की मशीन (पल्पिंग मशीन) से गूदा निकाल लेते हैं। इस गूदे को जैम, शरबत, सॉस इत्यादि बनाने में प्रयोग कर सकते हैं।

आँवला का मुरब्बा

आवश्यक सामग्री

आँवला 10 किग्रा, चीनी 15 किग्रा, साइट्रिक अम्ल 30 ग्राम।

बनाने की विधि

- बड़े आकार के आँवले लेकर इन्हें दो दिन तक सादे पानी में पड़े रहने दीजिए।
- अब इन्हें स्टैंडर्ड स्टील के काँटों से अच्छी तरह गोदाई कर लीजिए।
- अब इन्हें 2 प्रतिशत नमक के घोल में रात भर के लिए छोडें।
- अगले दिन आँवला को 4 प्रतिशत नमक के घोल में रात भर के लिए छोड़ दें।
- आँवलों को अच्छी तरह से पानी से धो लें और 2 प्रतिशत फिटकरी का घोल बनाकर 1 दिन के लिए इस घोल में छोड़ दें।
- आँवलों को घोल से निकालकर चार से पाँच बार पानी से धोएं आँवले की गोदाई अच्छी होनी चाहिए अन्यथा उत्तम किस्म का मुरब्बा नहीं बनेगा।

*सह प्राध्यापक, कमला नेहरू भौतिक एवं सामाजिक विज्ञान संस्थान, सुल्तानपुर, उत्तर प्रदेश – 228001

**शोध छात्रा, मानव पोषण विभाग, गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पन्तनगर, उत्तराखण्ड – 263145

- अब आँवलों को मलमल के कपड़े में बाँधकर उबलते पानी में 5 से 7 मिनट तक पकाएं, लेकिन ध्यान रहे कि आँवले फटे नहीं तथा सख्त भी न रहें।
- 1 किग्रा चीनी व आधा लीटर पानी के हिसाब से चाशनी बनाएं। चाशनी को एक उबाल आने तक उबाल लीजिए तथा साइट्रिक अम्ल मिलाकर चाशनी का मैल निकाल लीजिए और इसे कपड़े से छानकर आँवलों को गरम चाशनी में 24 घण्टे के लिए छोड़ दीजिए।
- दूसरे दिन आँवलों को निकालकर चाशनी में और चीनी मिलाकर गाढ़ा करें और आँवलों को इस चाशनी में डालें।
- तीसरे दिन फिर आँवलों को निकालकर चाशनी को इतना पकाएं कि एक तार बनने लग जाए या इसमें चीनी की मात्रा 70 से 72 प्रतिशत हो जाए। ऐसी अवस्था में आँवलों को फिर गर्म चाशनी में डाल दीजिए।
- जब मुरब्बा ठंडा हो जाए तो इसे सूखे डिब्बे में भर दीजिए यह ध्यान रहे कि आँवले चाशनी में डूबे रहें।

आँवले का अचार

आवश्यक सामग्री

फल 1 किग्रा, जीरा 10 ग्राम, दालचीनी 10 ग्राम, लौंग 2 ग्राम, मेथी के बीज 25 ग्राम, सरसों का तेल 250 ग्राम, नमक 150 ग्राम, बड़ी इलायची 10 ग्राम, लाल मिर्च 10 ग्राम, हल्दी 25 ग्राम, सरसों के बीज 50 ग्राम।

बनाने की विधि

- पूर्ण विकसित स्वस्थ तथा दाग रहित आँवले लेकर धो लीजिए।
- इन्हें 5 से 7 मिनट तक उबलते पानी में डालकर उबाल लीजिए।
- इन्हें फैला दीजिए ताकि उन पर लगा पानी सूख जाए।
- सब मसालों को बारीक पीस लीजिए।
- एक बर्तन में कुछ तेल लेकर गर्म होने दीजिए आँवलों तक नमक को छोड़कर सब मसालों को तेल में अच्छी तरह भून लीजिए।
- बर्तन को आग से उतार दीजिए, इसमें आँवलें तथा नमक डालकर अच्छी तरह मिला दीजिए। जब ठंडा हो जाए तो इसे शीशे के बर्तन में भर दीजिए।
- 3–4 दिन तक अचार को 2–3 बार अच्छी तरह हिला दें।
- शीशे के बर्तन को 5 से 6 दिन तक धूप में रखिए इसमें बचा हुआ तेल डाल दीजिए लगभग एक सप्ताह में अचार खाने योग्य हो जाएगा।

आँवले की चटनी

आवश्यक सामग्री

आँवले का गूदा, 1 किग्रा जीरा भुना हुआ चूर्ण 10 ग्राम,
हल्दी पिसी 3 ग्राम, अदरक पिसी 10 ग्राम,
काली मिर्च 2 ग्राम, नमक 50 ग्राम,
लाल मिर्च पिसी 2 ग्राम, लहसुन 10 ग्राम,
राई भुना हुआ 1 ग्राम, सिरका 40 मिली

बनाने की विधि

- ताजे तथा स्वस्थ आँवले लेकर उबाल लीजिए
- इनकी गुठली निकालकर फाँके अलग कर लीजिए तथा इन्हें कुचलकर गूदा बना लीजिए।
- इसमें चीनी मिलाकर पकाने के लिए रख दें जब चीनी मिल जाए तो हल्दी, काली मिर्च, लाल मिर्च मिला दें, इसे चम्मच से चलाते रहें जब पककर गाढ़ी होने लगे तो अदरक, लहसुन, मेथी तथा जीरा चूर्ण आदि अच्छी तरह मिलाकर पकने दीजिए।
- जब यह पककर जैम की भाँति गाढ़ी हो जाए तो नमक तथा सिरका मिलाकर भगोने को आग से उतार दें तथा चटनी को गरम गरम ही चौड़े मुँह की बोतलों में भर दीजिए। ठंडा होने पर मोम पिघलाकर डाल दीजिए तथा ढक्कन लगाकर ठंडे व शुष्क स्थान में रख दें।

आँवले का च्यवनप्राश

आवश्यक सामग्री

आँवला 1 किग्रा, चीनी 1.5 किग्रा
काली मिर्च 10 ग्राम, जावित्री 10 ग्राम
जायफल 10 ग्राम, लौंग 10 ग्राम
छोटी इलायची 10 ग्राम, बड़ी इलायची 10 ग्राम
सौंठ 10 ग्राम, छोटी पीपल 10 ग्राम
दसमूल 4 ग्राम, बाला 5 ग्राम
जीवंती 5 ग्राम, पुष्करमूल 5 ग्राम
बगरकष्टा 5 ग्राम, हरीतकी 5 ग्राम
गुरूची 5 ग्राम, नीलकमल 5 ग्राम
अश्वगंधा 10 ग्राम, शतवारी 10 ग्राम
दाल चीनी 10 ग्राम, मुक्तासुक्ति पिश्टी 1 ग्राम
बंसलोचन 10 ग्राम, घी 20 ग्राम
तिल तेल 10 ग्राम, अभ्रक भस्म 1 ग्राम

बनाने की विधि

- आँवले को उबालकर गुठली निकालें।
- मिक्सी में पेस्ट बना लें व छान लें ताकि रेशा न रहे।
- सभी मसाले पीस कर छान लें।
- आँवले के पेस्ट व चीनी को मिलाकर पकाएं।
- गाढ़ा होने पर मसाले डालकर थोड़ा और पकाएं।
- ठंडा होने पर जार में भर लें।

आँवला जैम

आवश्यक सामग्री

आँवला 500 ग्राम, चीनी 500 ग्राम (2.5 कप)
इलायची 4 से 5, दालचीनी टुकड़ा 2 इंच।

बनाने की विधि

- एक बर्तन में आँवला और 1 कप पानी डाल कर गैस पर गरम करें। आँवले के मुलायम होने तक बर्तन को ढक कर इन्हें पकने दीजिए।
- 12 मिनट बाद, आँवलों को नरम होने पर गैस बंद करिये और आँवलों को एक प्याले में निकाल कर 2 मिनट तक ठंडा होने दीजिए। आँवले के हल्के ठंडे होते ही, इनको उंगलियों से दबाते हुए या चाकू से अलग–अलग हिस्सों में कर लीजिए। आँवलों को एक अलग प्याले में रख कर गुठली निकाल लें।
- मिक्सर जार में आँवलों को डाल कर पीस लीजिए और बारीक पेस्ट तैयार कर लीजिए। तैयार किये हुए पेस्ट को एक प्याले में निकाल लीजिए।
- कढ़ाई को आग पर रखकर आँवले के पेस्ट को चीनी के साथ डाल दीजिए। दोनों सामग्री को ढंग से मिलाइए और जैम की कन्सिस्टेन्सी गाढ़ा होने तक पका लीजिए। जैम के कढ़ाई के तले पर लगने से बचाने के लिए हर 1–2 मिनट बाद इसे चम्मच से चला लीजिए। कढ़ाई को आधा ढक कर जैम को चलाइए।
- जैम के गाढ़ा होते ही इसे चेक करने के लिए जैम की कुछ बूंदे एक प्याले में डालकर ठंडा कर देखिए। जैम के हल्के ठंडे होने पर इसकी बूँदों को उँगली के बीच में चिपकाकर देखिए। अगर यह चिपकने लगे और जैम की तरह गाढ़ा हो जाए तो जैम बनकर के तैयार है। जैम में दालचीनी इलायची पाउडर डाल कर अच्छे से मिक्स कर लीजिए। तैयार आँवला जैम को ठंडा होने पर जार में भर लें।

आँवले का शरबत

आवश्यक सामग्री

आँवला 1 किग्रा, नींबू 500 ग्राम
काली मिर्च 10 ग्राम, अदरक 300 ग्राम
चीनी 2 किग्रा, नमक काला 20 ग्राम।

बनाने की विधि

- ताजे आँवलों को धोकर कद्दूकस कर लें और रस निकाल लें।

- अदरक तथा नींबू का रस निकालें।
- चीनी की चाशनी बनाने के लिए 2 किग्रा चीनी में आधा लीटर पानी मिलाकर उबाल आने तक गरम करें और मैल हटा दें।
- चाशनी के ठंडा होने पर आँवले, नींबू, अदरक रस तथा नमक और काली मिर्च मिला दें।
- तैयार शरबत को बोतलों में भर लें
- यदि शरबत को कई दिनों तक प्रयोग में लाना हो तो उसमें 750 मिली सोडियम मेटाबाईसल्फाइट 1 लीटर शरबत के हिसाब से मिला दें।

आँवले के लच्छे

आवश्यक सामग्री

आँवला 1 किग्रा, नमक 20 ग्राम।

बनाने की विधि

- आँवलों को अच्छे से धोएं तथा कद्दूकस कर के नमक मिला लें।
- इनको 8 से 10 दिन तक छाया में सुखा लें।
- जब यह पूरी तरह सूख जाए तो डिब्बों में भरकर रख लें।

आँवले का चूर्ण

आवश्यक सामग्री

आँवला 1 किग्रा, काला नमक 100 ग्राम
साइट्रिक अम्ल 25 ग्राम, हींग 10 ग्राम
सौंफ 10 ग्राम, नमक 50 ग्राम
चीनी 125 ग्राम, काली मिर्च 15 ग्राम
सौंठ 15 ग्राम, अजवाइन 5 ग्राम।

बनाने की विधि

- आँवले को उबाल कर फाँके बना लें तथा इन फाँकों को धूप या ट्रे ड्रायर में सुखा लें। सूखने पर फाँकों को पीसकर चूर्ण बना लें सभी मसालों को पीस लेते हैं तथा आपस में मिला लेते हैं। इस चूर्ण को जार या बोतलों में भरकर रख सकते हैं।
- इसी प्रकार आँवले से त्रिफला चूर्ण बना सकते हैं। इसके लिए आँवला हरड़ तथा बहेड़ा को 1:1:1 के अनुपात में मिलाते हैं तीनों फलों को सुखाकर पीस लेते हैं और आपस में मिला लेते हैं। त्रिफला बहुत ही गुणकारी औषधि है।

आँवला कैंडी

बनाने की विधि

- आँवला कैंडी मुरब्बे का सूख प्रतिरूप ही है। मुरब्बे को चाशनी में से निकालकर छाया में तब तक सुखाएँ, जब तक नमी की मात्रा 15 प्रतिशत रह जाए या कुल घुलनशील पदार्थ 75 प्रतिशत हो जाए। इसके बाद दोनों को बूरा में लपेट दें और पॉलीथीन की थैली में भरकर भंडारण करें।

आँवला कैंडी बनाने के लिए आवश्यक सामग्री

- आँवला 1 किग्रा, चीनी 700 ग्राम

आँवला कैंडी बनाने की विधि

- आँवलों को साफ पानी से साफ कर लें ताकि काई कीटाणु ना रह जाए।
- एक बर्तन लें और उसमें कुछ पानी डालकर उन्हें उबालें, ध्यान रहें कि पानी इतना हो कि सारे आँवलें उसमें डूब जाएं। पानी उबलने पर इसमें आँवलें डालें और करीब 2 मिनट तक उन्हें उबलने दें। आँवले के बर्तन को ढक दें और आँवलों को उसी गर्म पानी में 5 मिनटों के लिए रहने दें।
- उसके बाद पानी को निकाल दें और आँवलों को छोटे–छोटे हिस्सों में काटें, ध्यान रहें कि आँवलों की सारी गुठली हटा देनी है।
- एक अन्य बर्तन लें और उसमें कटे हुए आँवले डालें, इसमें 650 ग्राम चीनी भर दें शेष 50 ग्राम चीनी को पीसकर उनका चूर्ण बनाएं। इस बर्तन को ढककर एक दिन के लिए ऐसे ही छोड़ दें।
- अगले दिन सारी चीनी शरबत में बदल चुकी है

और आँवले उस शरबत के ऊपर तैर रहे हैं। इन्हें चम्मच की मदद से चलायें और फिर से ढककर रखा रहने दें। 3 दिनों के बाद आँवले बर्तन की तली में नीचे बैठ गए होंगे क्योंकि इनमें चीनी पूरी मात्रा में भर चुकी है जिसके कारण उनका वजन भारी हो चुका है।

- आँवलों को अलग निकाल के छलनी से शरबत को अलग करें।
- आँवले के टुकड़ों को एक बड़ी सी प्लेट में डालें और उनको धूप में सूखने के लिए रख दें।
- जब ये सूख जाए तो इनमें 50 ग्राम चीनी का चूरा ऊपर से बुरक दें। आँवले की कैंडी तैयार हो जाती है। इन्हें किसी बर्तन में भरें और दिन में 6 से 7 टुकड़े खाएँ, स्वादिष्ट होने के साथ–साथ ये आपके स्वास्थ्य को भी बनाए रखेगी।

मसालेदार आँवला कैंडी

मसालेदार कैंडी बनाने के लिए कैंडी के सूखने के बाद उसमें चीनी के साथ–साथ 1 चम्मच काला नमक, 1 चम्मच काली मिर्च और इतना ही आमचूर का पाउडर भी डालें। स्पाइसी आँवला कैंडी तैयार हो जाती है।●

(पृष्ठ 6 का शेष)

फास्फोरस की पूर्ति सिंगल सुपर फास्फेट से करना अधिक लाभप्रद पाया गया है।

सिंचाई

यह फसल प्रायः असिंचित रूप में बोई जाती है, परन्तु जहाँ सिंचाई का साधन उपलब्ध है वहाँ दो सिंचाई, पहली फूल आने से पहले तथा दूसरी दाना बनते समय करने से उपज में बढ़ोत्तरी होती है।

फसल सुरक्षा

(1) अल्टरनेरिया झुलसा

इस रोग का प्रकोप पौधे के सभी भागों पर होता है। सर्वप्रथम पत्तियों के ऊपरी सतह पर गहरे कत्थई रंग के गोल धब्बे के रूप में लक्षण दिखाई पड़ता है, जो छल्लेदार होता है। यह रोग ऊपर की ओर बढ़कर तने, शाखाओं, पुष्पक्रमों एवं फलियों को प्रभावित करता है। रोग की उग्र अवस्था में फलियाँ काली पड़कर मर जाती हैं और हल्का सा झटका लगने पर टूट जाती हैं।

रोकथाम

(1) बीज को 2.5 ग्राम थीरम प्रति किग्रा बीज की दर से शोधित करके बोयें।

(2) बुवाई नवम्बर के प्रथम सप्ताह में करें।

(3) गरिमा, शुभ्रा, श्वेता, शिखा, शेखर तथा पद्मिनी प्रजातियाँ बोयें।

(4) खड़ी फसल में मैंकाजेब 2.5 किग्रा/हेक्टेयर की दर से 40–50 दिन पर छिड़काव करें। दूसरा तथा तीसरा छिड़काव 15 दिनों के अन्तराल पर करें।

(2) रतुआ या गेरूई

इस रोग में पत्तियों, पुष्प शाखाओं तथा तने पर रतुआ के नारंगी रंग के फफाले दिखाई देते हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए मैंकाजेब 2.5 किग्रा अथवा घुलनशील गंधक 3.0 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

(3) उकठा रोग

रोग ग्रसित पौधों की पत्तियाँ नीचे से ऊपर की ओर पीली पड़ने लगती हैं तथा बाद में पूरा पौधा सूख जाता है। इस रोग से बचाव हेतु दीर्घ अवधि का फसल चक्र अपनायें।

(4) बुकनी

इस रोग में पत्तियों पर सफेद चूर्ण सा फैल जाता है और बाद में पत्तियाँ सूख जाती हैं। इसकी रोकथाम हेतु घुलनशील गंधक 3.0 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

अलसी के कीट

गालमिज

नवजात मैगट सफेद पारदर्शी एवं पीले धब्बेयुक्त होते हैं जो पूर्ण विकसित होने पर गहरे नारंगी रंग के हो जाते हैं। प्रौढ़ कीट गहरे नारंगी रंग की छोटी मक्खी होती है। इसकी छोटी गिडारें फसल की खिलती कलियों के अन्दर के पुंकेसर को खाकर नुकसान पहुँचाती हैं जिससे फलियों में दाने नहीं बनते हैं।●

रैबीज (जलांतक) पशुओं से मनुष्यों में होने वाली एक घातक बीमारी

प्रो. नमिता जोशी* एवं प्रो. आर.के. जोशी**

रैबीज जिसे अलर्क रोग या जलांतक के नाम से जाना जाता है, मानव जाति में होने वाली एक अत्यन्त प्राचीन बीमारी है, जिसका वर्णन हमारे वेद पुराणों में भी मिलता है। रैबीज शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के एक शब्द 'रभास' से हुई जिसका अर्थ है हिंसा करना। जैसा कि नाम से विदित है यह एक प्राण घातक बीमारी है जिसमें कि व्यक्ति अथवा जानवर आक्रामक हो जाते हैं और अन्त में मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

यह बीमारी एक विषाणु द्वारा होती है, जिसे लाइसा वायरस कहते हैं। रैबीज मुख्य रूप से संक्रमित पशु के काटने से फैलता है जैसे कुत्ता, बिल्ली। इसके अलावा यह रोग भेड़िया, नेवला, लोमड़ी, बन्दर, चमगादड़ इत्यादि के काटने से भी हो सकता है। परन्तु भारत वर्ष में मुख्य रूप से यह बीमारी संक्रमित कुत्ते के काटने से फैलती है। पशुओं के काटने से होने वाली इस बीमारी से पूरे विश्व में लगभग 60 हजार मौतें प्रतिवर्ष होती हैं तथा लगभग 7.4 लाख लोग जानवर के काटने के उपरान्त टीकाकरण करवाते हैं।

अकेले भारत वर्ष में प्रतिवर्ष लगभग 25–30 हजार मौते होती हैं। इनमें प्रमुख रूप से 95 प्रतिशत कुत्तों के काटने से होती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार रैबीज से होने वाली मौते बारहवें क्रम पर हैं।

भारत वर्ष में रैबीज से होने वाली 50 प्रतिशत मौते पन्द्रह साल से कम उम्र के बच्चों में होती है। यह आँकड़े इंगित करते हैं कि बहुत प्राचीन रोग होने के बावजूद यह रोग पूरे विश्व में एक बड़ी समस्या के रूप में विद्यमान है। इसीलिए विश्व स्वास्थ्य संगठन व अन्य गैर सरकारी संगठनों ने इस रोग को 2030 तक इसी क्रम में लोगों में जागरूकता उत्पन्न करने के उद्देश्य से 28 सितम्बर को विश्व रैबीज दिवस के रूप में मनाया जाता है

रैबीज कुत्तों के काटने से फैलने वाली एक प्राण घातक बीमारी है, जिसका कोई इलाज संभव नहीं है। परन्तु यदि इस रोग के बारे में जानकारी हो तो इससे बचा भी जा सकता ह। यूँ तो यह रोग व्यक्ति को किसी भी उम्र में हो सकता है। परन्तु ज्यादातर बच्चे इसका शिकार होते हैं। क्योंकि वह सड़क पर घूमने वाले कुत्ते, बिल्लियों के साथ खेलना पसंद करते हैं। यदि किसी कुत्ते में रैबीज के विषाणु हैं तो सर्वप्रथम वह उनकी लार में उत्सर्जित होने लगते हैं। ऐसा कुत्ता यदि किसी व्यक्ति को काट ले या उसके शरीर में किसी कटे हुए घाव को चाट ले तो विषाणु उस व्यक्ति के शरीर में प्रवेश कर जाता है। काटने के स्थान से विषाणु दिमाग की ओर धीरे–धीरे तंत्रिकओं (नसों) के माध्यम से फैलता है। दिमाग में पहुँचने पर यह विषाणु अपनी संख्या बढ़ाता है तत्पश्चात शरीर के विभिन्न अंगों में फैलता जाता है। यह विषाणु मुख्य रूप से शरीर की लार ग्रन्थि को प्रभावित करता है जिससे कि व्यक्ति के मुख से बहुत ज्यादा मात्रा में लार गिरने लगती है। मस्तिष्क में सूजन आ जाती है तथा निगलने वाली पेशियों को लकवा मार जाता है जिसकी वजह से व्यक्ति को पानी निगलने में काफी दर्द होता है। अतः वह पानी को देख कर डरने लगता है इसीलिए यह रोग जलांतक (हाइड्रोफोविया पानी का भय) नाम से भी जाना जाता है।

बीमारी के लक्षण

मनुष्य में बीमारी के लक्षण आने में एक सप्ताह से वर्षों तक लग सकता है। प्रारम्भ में इस बीमारी में मनुष्य के व्यवहार में परिवर्तन आता है। जैसे चिन्तित होना, भ्रमित होना, बुखार, सरदर्द, बदनदर्द, बेचैनी व काटे गये स्थान के आस–पास खुजती होती है। कुछ समय बाद मनुष्य का चिड़चिड़ापन बढ़ता जाता है। उसको

*विभागाध्यक्ष, पशुलोक स्वास्थ्य एवं महामारी विज्ञान विभाग, **प्राध्यापक एवं प्रभारी, पशु सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या–224229

पानी, तेज प्रकाश, हवा, आवाज इत्यादि से भय लगने लगता है। याददाश्त खत्म हो जाती है। नींद नहीं आती है। आखिर में उसके मुख से बहुत लार गिरने लगती है आँख की पुतली फैल जाती है तथा रोगी को दौरे पड़ने लगते हैं, धीरे–धीरे रोगी कोमा (बेहोशी) में चला जाता है। अन्त में उसकी मृत्यु हो जाती है। कभी–कभी कुछ लोगों में बीमारी की आक्रामक अवस्था नहीं दिखाई देती है। मनुष्य सुस्त होकर लकवा ग्रसित हो जाता है और अन्त में मर जाता है। इस फार्म में व्यक्ति में उत्तेजना नहीं दिखाई देती। इस बीमारी के लक्षण आने के उपरान्त पाँच से दस दिनों के भीतर (श्वसन तंत्र व हृदय गति रूक जाने से) रोगी की मृत्यु हो जाती है।

कुत्तों में रैबीज के लक्षण

बीमारी का संक्रमण काल कुत्तों में 10 दिन से लेकर छः माह तक हो सकता है। बीमारी के लक्षण आने से पहले इसके विषाणु कुत्ते के लार में आने लगते हैं। उसके व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है। जैसे कि बिना उकसाये किसी को काटना, बिना किसी उद्देश्य के घर से बाहर दौड़ना, घूमना, लोगों का भय समाप्त हो जाना इत्यादि। कुत्ता अवांछनीय चीजे जैसे लकड़ी, पत्थर, कपड़ा, तार आदि को काटने की कोशिश करता है। कुत्ता बहुत ही आक्रामक हो जाता है तथा उसकी आवाज में भी परिवर्तन आ जाता है। उसे देखने में ऐसा प्रतीत होता है जैसे गले में कुछ अटक गया हो। उसके मुख से लगातार अत्यधिक मात्रा में झाग निकलती रहती है। अतः इन्ही लक्षणों के आधार पर हम कहते हैं कि कुत्ता पागल हो गया है। बीमारी की इस स्थिति को आक्रामक अवस्था कहा जाता है। यदि पागल कुत्ता किसी को काट ले तो उसकी मृत्यु होना निश्चित है। कभी–कभी कुत्तों में डम्ब फार्म यानी सुस्त अवस्था दिखाई देती है, कुत्ता किसी कोने में जाकर बैठ जाता है, अपने आप को छिपाने की कोशिश करता है। उसे लकवा मार जाता है जिससे वह लड़खड़ाते हुए चलता है तथा अन्त में गिर जाता है। गले की मांसपेशियों को लकवा मार देने से उसे निगलने में कठिनाई होती है तथा लार गिरने लगती है। ऐसी स्थिति में शरीर में भोजन पानी नहीं पहुँच पाने के कारण कुत्ते की कुछ ही समय बाद मृत्यु हो जाती है।

बचाव के उपाय

यदि व्यक्ति को इस बीमारी के बारे में थोड़ी सी भी जानकारी हो तो इसका बचाव समय रहते सम्भव है। क्योंकि यह रोग केवल शरीर में घाव के माध्यम से ही फैलता है अतः बचाव का सबसे सटीक तरीका कुत्ते, बिल्ली आदि पशुओं द्वारा काटे जाने से बचना है।

प्राथमिक उपचार

(1) काटे गये स्थान के घाव को तुरन्त ही तेज पानी के धार से एवं साबुन से अच्छी तरह से धोना चाहिए।

(2) काटे गये स्थान पर टिन्चर या पोबिडान (आयोडीन का सल्यूशन) लगाना चाहिए ऐसा करने से इस रोग के प्रभाव से काफी हद तक बचा जा सकता है।

टीकाकरण

टिटनेस का टीका लगवाना चाहिए। पीड़ित व्यक्ति को डॉक्टर की सलाह पर टीकाकरण करवाना चाहिए। प्रारम्भ में इस बीमारी के बचाव हेतु चौदह टीके पेट में लगाये जाते थे। जिसकी वजह से लोग भय के मारे टीकाकरण नहीं करवाते थे। परन्तु वर्तमान में कई अच्छे आधुनिक टीके आ जाने से अब टीकाकरण आसान हो गया है। तीन से लेकर छः तक टीके लगाये जाते हैं जो कि डॉक्टर के परामर्श से रोगी के हाथ में लगाए जाते हैं घाव में पुरानी धारणानुसार कभी भी हल्दी, मिर्चा, नमक इत्यादि नहीं लगाना चाहिए।

कुत्ते को 10 दिन तक निगरानी में रखना चाहिए। कुत्ता पागल होने की सूचना निकटतम स्थानीय संस्था को देनी चाहिए। पागल हो जाने पर कुत्ते को मारना की एकमात्र विकल्प है।●

नवम्बर माह में किसान भाई क्या करें

फसलों में

डॉ. सौरभ वर्मा
सह प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

(1) धान का खूँट सड़ाने के लिए 40 किग्रा यूरिया प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने के बाद ही गेहूँ की बुवाई करें

(2) गेहूँ की संस्तुति प्रजाति जैसे डी.वी.डब्ल्यू. 187, 17, एच.डी. 2967, 2733, एन.डब्ल्यू.5054, पी.वी.डब्ल्यू.502, 550 आदि के प्रमाणित बीज की बुवाई 18–22 सेमी की दूरी पर करें।

(3) सरसों बुवाई के 14–20 दिन के अन्दर विरलीकरण करें।

(4) अलसी की संस्तुति प्रजातियों जैसे नीलम, लक्ष्मी, गरिमा, श्वेता, शुभ्रा, गौरव आदि के प्रमाणित बीज की बुवाई पन्द्रह नवम्बर से पहले अवश्य कर दें।

सब्जी एवं उद्यान में

डॉ. एस. के. वर्मा
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष

(1) पुराने बाग में खाद का प्रयोग अवश्य कर लें। आम के पेड़ में इस समय पुष्प कलिका का सृजन होता है, अतः सिंचाई न करें। बेर, बेल, आँवला, पपीता एवं अमरूद में 10–15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करें।

(2) पिछेती पातगोभी तथा गाँठगोभी जिसकी पौध अक्टूबर मार्च में डाली गयी है, एक माह की होने पर रोपाई कर दें।

(3) टमाटर की किस्म मनीमेकर की पौध डालें।

(4) पालक की किस्म आलग्रीन और पूसा ज्योति की बुवाई करें।

(5) मेथी की पूसा अर्ली बंचिंग तथा कोयम्बटूर नं. 1 की बुवाई करें।

फसल सुरक्षा

डॉ. वी. पी. चौधरी
सहायक प्राध्यापक (पादप रोग)

(1) गेहूँ की बुवाई से पूर्व संस्तुत रसायन जैसे थीरम 2.0 ग्राम, 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किग्रा बीज की दर से बीज का शोधन अवश्य करें। जहाँ अनावृत्त कण्डुआ की समस्या हो, वहाँ कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम प्रति किग्रा की दर से प्रयोग करें।

(2) गेहूँ के असिंचित क्षेत्रों में भूमिगत कीट जैसे दीमक, गुजिया के नियंत्रण के लिए खेत की अन्तिम जुताई पर 14 किग्रा फोरेट–10जी का प्रयोग करना चाहिए।

(3) सरसों की आरा मक्खी, सफेद गेरूई एवं झुलसा के नियंत्रण के लिए इण्डोसल्फान 35 ई.सी. 1.25 लीटर अथवा मैंकोजेब 2 किग्रा प्रति हेक्टेयर 800–1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

(4) दलहनी फसलों की बुवाई से पूर्व संस्तुत रसायन जैसे थीरम 2.5 ग्राम या जिंक मैंगनीज कार्बामेन्ट 2 ग्राम या कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से शोधित कर बुवाई करें।

(5) पपीता में विषाणु रोग (पत्ती सिकुड़न) की रोकथाम हेतु इमिडाक्लोप्रिड 0.5 मिली प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

(6) बीजू आलू को माँहू से बचाव हेतु फोरेट 10 जी 10 किग्रा/हेक्टेयर मिट्टी चढ़ाते समय अवश्य प्रयोग करें।

(7) सब्जी बीज शोधन 6 प्रतिशत पारायुक्त रसायन 250 ग्राम को 1.25 लीटर पानी में घोलकर 5 मिनट तक करें।

(8) आम के गुच्छा रोग की रोकथाम हेतु एन.ए. 200 पीपीएम अर्थात 200 मिग्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करे।

पशुपालन

डॉ. अनिल कुमार
सह प्राध्यापक (पशु विज्ञान)

(1) दुधारू पशुओं तथ नवजात बछड़ों को सर्दी से बचाव हेतु खिड़कियों तथा दरवाजों पर टाट या बोरे का परदा लगा दें।

(2) नवजात पड़िया/बछिया/बछवा को प्रथम (खींस) प्रारम्भ के तीन दिन तक अवश्य दें।

(3) दुधारू पशुओं से अधिक दूध उत्पादन प्राप्त करने हेतु उन्हें पौष्टिक आहार देना चाहिए। इसके लिए सूखा चारा के साथ–साथ हरा चारा अवश्य दें। साथ ही गाय को 3 लीटर दूध उत्पादन पर तथा भैंस को 2–2.5 लीटर दूध उत्पादन पर 1 किग्रा संतुलित राशन अवश्य देना चाहिए।

(4) बकरी पालने वाले कृषक भाई बकरियों तथा उनके बच्चों को सर्दी से बचाने हेतु उनके पीठ पर बोरा बाँध दें जिससे ठण्ड से बचाव हो सके।

(5) जो किसान भाई कुक्कुट पालन का कार्य कर रहे हों उन्हें चाहिए कि वे सर्दी से बचाव हेतु खिड़कियों दरवाजों आदि पर टाट या बोरे के पर्दे लगा दें।

(6) एक दिन के चूज़ों में रानी खेत एफ–1 छः सप्ताह पर रानी खेत एफ–2 तथा 8 सप्ताह की उम्र में चेचक से बचाव हेतु टीकाकरण करायें।

(7) भूमिहीन, लघु व सीमान्त कृषकों के लिए बकरी पालन एक अच्छा एवं लाभकारी रोजगार है इसके लिए बकरियों की प्रमुख नस्लें जैसे जमुनापारी, बरबरी, ब्लैक बंगाल, कच्छी, मालवारी नस्लें प्रमुख हैं इनसे किसान भाई अच्छा उत्पादन प्राप्त कर आर्थिक लाभ उठा सकते हैं।

(8) मांस उत्पादन करने वाली मुर्गियों के उचित विकास हेतु उत्तम एवं पूर्णरूप संतुलित आहार का प्रयोग करना चाहिए।

संकलनकर्ता : डॉ. अनिल कुमार, सह प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : गेहूँ में बथुवा की समस्या बहुत अधिक हो जाती है, इसकी रोकथाम कैसे करें?

(श्री राधे श्याम वर्मा, ग्राम भीखापुर, जनपद अयोध्या)

उत्तर : गेहूँ की फसल जब 30–35 दिन की हो जाए तब उसमें 2, 4 डी सोडियम साल्ट 80 प्रतिशत की 625 ग्राम मात्रा को 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें। इससे अच्छे परिणाम के लिए 2,4 डी 200 ग्राम सक्रिय पदार्थ के साथ आइसोप्रोट्यूरान 500 ग्राम (सक्रिय पदार्थ) प्रति हेक्टेयर 600–700 लीटर पानी में घोलकर उक्त अवस्था पर छिड़काव करने से अधिकांश खरपतवार समूल नष्ट हो जाते हैं।

प्रश्न : आँवले में फल लगने के बाद काला दाग पड़ जाता है जिससे फल गिर जाते हैं, रोकथाम कैसे करें?

(श्री जियाउद्दीन अहमद, ग्राम पूरे हैसेन, जनपद अयोध्या)

उत्तर : आँवले के फल में कालापन भूमि में बोरान की कमी के कारण होता है। इसके उपचार हेतु सितम्बर माह से 15 दिन के अन्तर से 0.6 प्रतिशत बोरेक्स 6 ग्राम प्रति लीटर की दर से तीन बार छिड़काव करें।

प्रश्न : गाय और भैंस समय से गर्म नहीं होती क्या कारण है?

(श्री मीनू, ग्राम कोला, जनपद अयोध्या)

उत्तर : गाय अथवा भैंस का ऋतुमय में न आने के तमाम कारण होते हैं। इसमें मुख्य रूप से पशु का कमजोर होना, आहार में लवणों की कमी, परजीवियों का प्रकोप, अण्डाशय, पीयूष ग्रन्थि (पिट्यूटरी ग्लैण्ड) तथा गर्भाशय आदि के विकारों के फलस्वरूप ऋतुचक्र रूक जाता है। इनमें बहुत से ऐसे कारण हैं जिन पर ध्यान देने से लगभग 60–65 प्रतिशत पशुओं में इस समस्या से बचा जा सकता है।

प्रश्न : अच्छे किस्म का बीज किस संस्थान से प्राप्त करें?

(श्री छेदी यादव, ग्राम मसौधा, जनपद अयोध्या)

उत्तर : उन्नत किस्म का बीज प्रमुखतः धान, अरहर, चना, मटर, तोरिया, सरसों तथा गेहूँ का आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या के बीज तकनीकी विभाग से आप प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर है, वहाँ से भी उन्नत किस्म का बीज प्राप्त किया जा सकता है। वैसे प्रत्येक जनपद के कृषि विभाग द्वारा भी उन्नत किस्म का बीज उपलब्ध कराया जाता है।

प्रश्न : अण्डा उत्पादन हेतु मुर्गियों की कौन सी नस्ल अच्छी पायी जाती है?

(श्री असलम, ग्राम जगदीशपुर, जनपद अमेठी)

उत्तर : अण्डा उत्पादन हेतु व्हाइट लेगहार्न, रोड आइसलैण्ड रेड नस्लें अच्छी पायी जाती हैं। परन्तु व्यवसायिक अण्डा उत्पादन हेतु व्हाइट लेगहार्न नस्ल सबसे अच्छी पायी गयी है जो एक वर्ष में लगभग 280 से 320 अण्डे का उत्पादन करती है परन्तु अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए इसका वैज्ञानिक तरीके से प्रबन्धन करना आवश्यक है। अधिक जानकारी हेतु कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या से सम्पर्क कर सकते हैं।

लेखकों से अनुरोध

- लेख भेजने से पहले यह सुनिश्चित कर लें कि आप पूर्वांचल खेती की वार्षिक सदस्यता ग्रहण कर लिए हैं, जो रूपया दौ सौ बीस (220.00) मात्र ही देय होगा। एक लेख में जितने भी लेखक होंगे सभी की सदस्यता अनिवार्य होगी।
- लेख भेजते समय पूर्वांचल खेती की सदस्य संख्या तथा सदस्यता अवधि सभी लेखकों को लेख के ऊपर लिखना अनिवार्य होगा।
- लेख फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, गृह विज्ञान, मत्स्य अथवा पशुपालन आदि विषयों पर आधारित हो।
- लेख दो प्रतियों में डबल स्पेस में टाइप हो।
- लेख आकर्षक एवं अपने में ठोस हो।
- लेख आंकड़े से भरपूर हो।
- सम्बन्धित माह तथा मौसम की जानकारी से छः माह पूर्व प्रेषित हो।

प्रधान सम्पादक

पंजीयन संख्या - 54461/91 डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्ज़ियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित